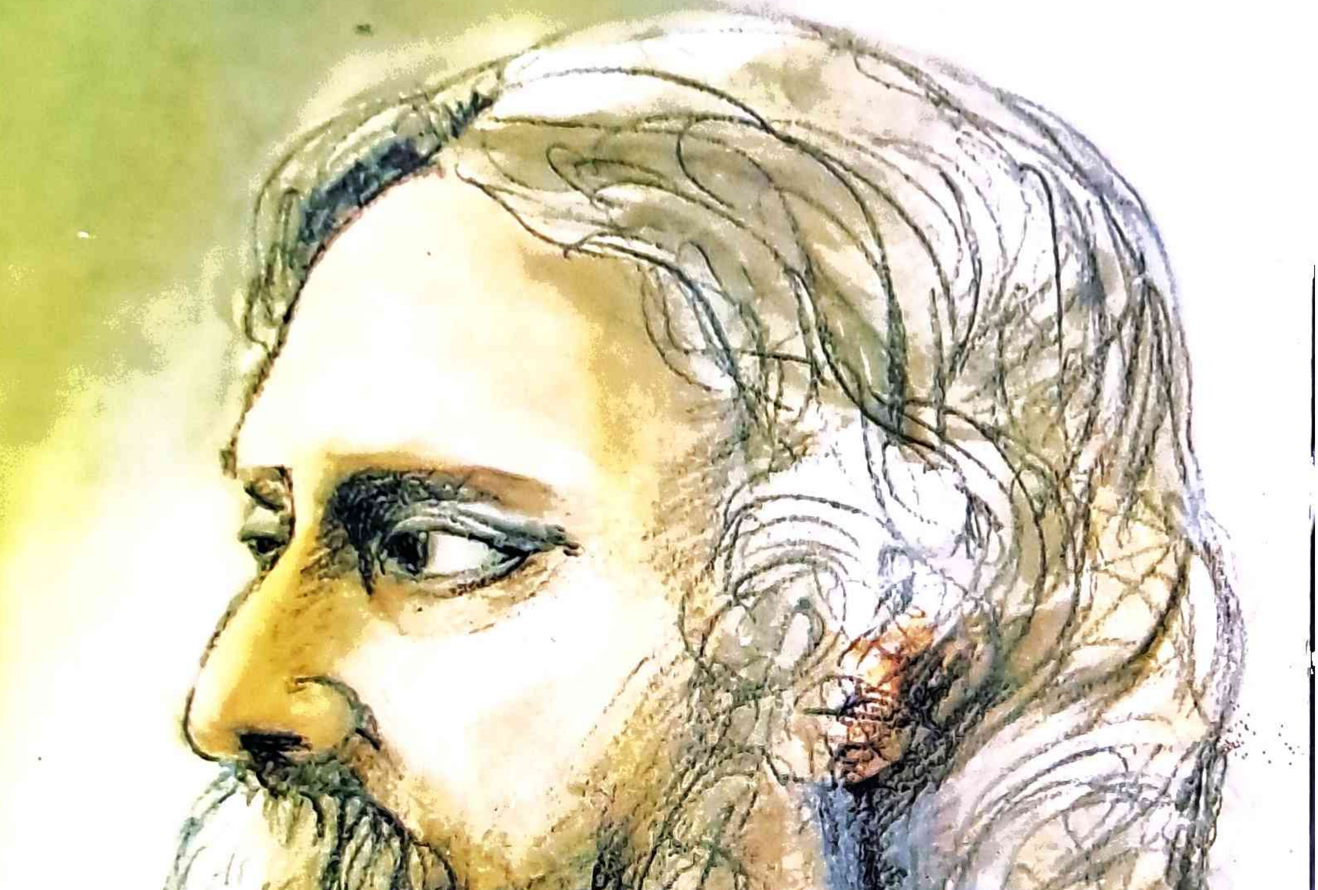
खण्ड-27

रवींद्रनाथ टैगोर रचनावली



एला दीदी

प्रधान संपादक : इन्द्र नाथ चौधुरी

एला दीदी

भूमिका

जहाँ तक एला को याद है, उसके जीवन का प्रथम अध्याय विद्रोह के बीच आरंभ हुआ था। उसकी माँ मायामयी के स्वभाव में कुछ विचित्रता थी— उनका व्यवहार विचार-विवेचन के प्रशस्त पथ पर नहीं चल पाता था। वे अपने अविचारी स्वभाव के आवेग में प्रायः अपनी गृहस्थी को क्षुब्ध-विक्षुब्ध कर डाला करती थीं। शासन में अन्याय करतीं और बिना किसी कारण संदेह किया करती थीं। लड़की जब किसी अपराध को अस्वीकार करती, तो वे फौरन कह बैठतीं, ''झूठ बोल रही है तू!'' इसका नतीजा यह हुआ कि लड़की ने बिना किसी मिलावट के शुद्ध सत्य बोलने की ही आदत डाल ली और इसी कारण उसको सबसे ज्यादा सजा भी भोगनी पड़ी। हर प्रकार के अविचार-अन्याय के विरुद्ध असहिष्णुता का भाव उसके मन में प्रबल हो उठा और उसकी माँ को लगता था कि यही बात स्त्री की धर्मनीति के विरुद्ध है।

लेकिन एक बात एला ने बचपन में ही समझ ली थी कि दुर्बलता ही अत्याचार का प्रधान वाहन होती है। उसके परिवार में जितने भी आश्रित लोग थे, जो दूसरों के अनुग्रह की छाया में असहाय रूप से पड़े रहते थे, उन्हीं लोगों ने उसके परिवार के वातावरण को गंदा किया था—उन्हीं लोगों ने उसकी माँ की अंधी प्रभुत्व-लालसा को बाधाहीन कर डाला था। इस अस्वास्थ्यकर अवस्था की प्रतिक्रिया के रूप में ही उसके मन में अल्पवय से स्वाधीनता की आकांक्षा इतनी प्रबल हो उठी थी।

एला के पिता नरेश दास गुप्त विलायत से 'साइकॉलॉजी' (मनोविज्ञान) में एक विश्वविद्यालय की डिग्री हासिल कर लाए हैं। उनकी वैज्ञानिक विचार-शक्ति बड़ी तेज है। अध्यापन-कार्य में वे विशेष रूप से यशस्वी हुए हैं। एक प्रादेशिक प्राइवेट कॉलेज में उन्हें स्थान मिला है। इसी प्रदेश में उनका जन्म भी हुआ था। सांसारिक उन्नति की ओर उनका झुकाव कम है, और इसके लिए आवश्यक दक्षता भी उनमें साधारण ही है। वे गलती से लोगों पर विश्वास कर लेते हैं और इस तरह विश्वास करके प्राय: अपनी हानि कराया करते हैं—बार-बार यह अनुभव होने पर भी वे अपनी आदत ठीक नहीं कर सके। ठगकर या अनायास ही जो लोग किसी का उपकार प्राप्त कर लिया करते हैं उनकी कृतघ्नता सबसे अधिक अकरुण होती है। जब कभी यह प्रकट हो जाता है, तो नरेश बाबू उसे मनुष्य के मनस्तत्व का एक विशेष तथ्य मानकर आसानी से स्वीकार कर लेते हैं, मन में या बाहर मुँह से भी कभी शिकायत नहीं करते। सांसारिक बुद्धि की कमी के कारण होनेवाली त्रुटियों के लिए उन्हें कभी भी अपनी स्त्री की क्षमा नहीं मिली, उल्टे हमेशा ताने ही सहने पड़े हैं। शिकायत के कारणों के पुराने हो जाने पर भी उनकी पत्नी उन्हें कभी भूलती नहीं थी और जब-तब मौका पाकर उन्हीं बातों को सुना-सुनाकर जैसे सुई चुभाकर उन्हें दम नहीं लेने देती थी।

मनुष्य पर अपने सहज विश्वास और अपनी उदारता के कारण अपने पिता को बार-बार ठगाते और दुख पाते देखकर उन पर एला का सदाव्यथित हृदय बहुत स्नेह रखता था, जिस तरह माँ अपने नासमझ बालक पर सकरुण स्नेह रखती है। सबसे अधिक चोट उसे तब पहुँचती थी जब उसकी माँ कलह भी भाषा में जोर देकर यह संकेत करती कि बुद्धि-व्यवहार में वह अपने पति से कहीं अधिक अच्छी है। एला ने कई अवसरों पर माँ के द्वारा अपने पिता का अपमान होते देखा, यहाँ तक कि गुस्से और मजबूरी के कारण वह आँसू से अपनी तकिया भिंगोती रही है। धैर्य की इस अति को अन्याय मानकर कई बार एला ने अपने पिता को मन-ही-मन दोषी ठहराया है।

एक दिन बहुत दुखी होकर एला ने अपने पिता से कहा, 'इस प्रकार चुपचाप अन्याय सह लेना ही अन्याय है?'

नरेश ने कहा, 'स्वभाव के विरुद्ध प्रतिवाद करना और गरम लोहे पर हाथ फेरकर उसे ठंडा करना दोनों बराबर है, एला! इसमें वीरता दिखाई जा सकती है लेकिन आराम नहीं पाया जा सकता।'

'लेकिन चुप रह जाने में आराम और भी कम मिलता है।' यह कहकर एला तेजी से वहाँ से चली गई।

और इधर घर में एला देखती कि जो माँ के मन की बात रखकर चलने का कौशल जानते हैं, उनके छल-छद्म के कारण निरपराधी ही अन्याय के शिकार होते हैं। एला से यह सब सहा नहीं जाता, वह उत्तेजित हो जाती है और न्यायकर्ता के सामने सत्य प्रमाण रखने की कोशिश करती है। लेकिन कर्तव्य के अहंकार के सामने अकाट्य युक्ति रखना एक प्रकार की दु:सह स्पर्धा है। तुफान की अनुकूल वायु की भाँति वह न्याय की नौका को आगे नहीं बढ़ाती, बल्कि उसे डुबाने की कोशिश करती है।

इस परिवार में एक और झंझट थी जो एला के मन को हमेशा चोट पहुँचाया करती थी। वह थी उसकी माँ की छुआछूत की आदत! एक दिन की बात है किसी मुसलमान मेहमान के बैठने के लिए एला ने चटाई बिछा दी। उस चटाई को माँ ने फेंक दिया। अगर वह ऊनी गलीचा बिछा देती तो कोई बात न होती। एला का तर्कप्रिय मन बिना तर्क किए मानता नहीं।

एक दिन उसने अपने पिता से पूछा, 'अच्छा, यह तो बताइए, यह सारी छुआछूत और नहाने-धोने की सनक स्त्रियों पर ही क्यों सवार रहती है? इन सब में हृदय की तो कहीं जगह ही नहीं, उल्टे उसका तो यहाँ विरोध ही है। यह तो जैसे मशीन की तरह अंधा होकर चलना हुआ!'

मनोविज्ञान के विशेषज्ञ उसके पिता बोले, 'स्त्रियों के मन में हजारों वर्षों से बंधन की जंजीरें पड़ी हैं, वे तो उन्हें मानती ही रहेंगी, कभी चूँ तक नहीं करेंगी और इसी बात पर उन्हें समाज के माने-जाने लोगों ने सम्मान दिया है। इसीलिए, इस तरह मानकर चलनेवाला जितना अंधा होता है, उसका मान उनके बीच और भी ज्यादा बढ़ता जाता है। जनानी तबीयत के आदमियों की भी यही दशा है।'

इस आचार-विचार की निरर्थकता के बारे में अपनी माँ से भी बार-बार प्रश्न किए बिना ऐला से नहीं रहा गया। और इसके उत्तर में उसे हमेशा

फटकार ही खानी पड़ी। लगातार इस तरह की चोटों को खाकर एला का मन अबाध्यता और विद्रोह की ओर झुक आया।

नरेश ने देखा कि इन सब पारिवारिक झगड़ों का लड़की के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है। इससे उन्हें बड़ा सदमा पहुँचा। इसी बीच एक दिन एला ने किसी विशेष अन्याय से आहत होकर अपने पिता के पास आकर कहा, 'बाबा, मुझे कलकत्ता किसी बोर्डिंग में भेज दीजिए!'

यह प्रस्ताव दोनों के लिए कष्टप्रद था, लेकिन पिता ने स्थिति समझ ली और मायामयी की ओर से कड़ा विरोध होने पर भी एला को दूर भेज दिया। फिर वे अपनी दुखभरी गृहस्ती और अध्ययन-अध्यापन में लग गए।

माँ बोली, 'लड़की को शहर भेजकर मेम बनाना चाहते हो तो बना डालो, लेकिन जब तुम्हारी लाड़ली लड़की सुसराल जाएगी तब उसकी जान पर आ बनेगी। तब फिर तुम मुझे दोष मत देना!'

अपनी बेटी में कलिकाल की इन आदतों और स्वाधीनता के इन कुलक्षणों को देखकर उसकी माँ ने बार-बार ऐसी आशंका प्रकट की है। इसीलिए एला के मन में यह धारणा बनती गई कि लड़कियों को अपना आत्म-सम्मान पंगु बनाकर ही ब्याह के लिए तैयार होना पड़ता है, और इसके लिए उनको न्याय-अन्याय के ज्ञान को भी मिटा देना होता है।

एला ने जब मैट्रिक पास करके कॉलेज में प्रवेश किया तो उसकी माँ की मृत्यु हो गई। नरेश ने बीच-बीच में मौका मिलने पर विवाह के प्रस्ताव पर लड़की को राजी करने की काफी कोशिश की; लेकिन वे इसमें सफल न हो सके। एला अत्यंत सुंदर है, इसलिए पात्रों की ओर से प्रार्थनाओं की कमी नहीं थी। लेकिन जैसे विवाह के प्रति एक प्रकार की विमुखता उसके मन में समा गई थी। लड़की ने परीक्षाएँ पास कर लीं, लेकिन उसके पिता भी उसे अविवाहित छोड़कर ही मर गए।

सुरेश उनका छोटा भाई था। नरेश ने ही अपने इस भाई को पाल-पोस कर बड़ा किया था और अंत तक अपने खर्च से पढ़ाया भी था। दो वर्ष उसे पढ़ने के लिए विलायत भेजकर उन्हें अपनी पत्नी से लांछित होना पड़ा था और महाजन का कर्जदार भी। सुरेश इस समय डाक विभाग में एक ऊँचे ओहदे पर काम करता है। अपने काम के लिए उसे बाहर दूर-दूर तक जाना

पड़ता है। अब उसी पर एला का भार आ पड़ा था और इस भार को उसने खुशी से ही स्वीकार किया था।

सुरेश की पत्नी का नाम है माधवी। वह जिस परिवार की लड़की है वहाँ लड़कियों को थोड़ा-सा ही पढ़ाना-लिखाना प्रचलित है—बस, बीच तक ही, ज्यादा नहीं। विलायत से लौटने के बाद जब उसके पति ऊँचे ओहदे पर नियुक्त हुए तो दूर-दूर यात्रा पर जाने का काम पड़ने लगा और उन्हें बाहर के विभिन्न प्रकार के लोगों से सामाजिकता निभाने के लिए भी तैयार होना पड़ा। साथ में पत्नी भी रहती थी। कुछ ही दिनों के अभ्यास से माधवी निमंत्रण-आमंत्रण में विजातीय लौकिकता निभाने में निपुण हो गई। यहाँ तक कि अंग्रेजों के क्लब में भी वह अपनी पंगु अंग्रेजी भाषा को कारण-अकारण हँसी के द्वारा पूरा करके काम चला लिया करती थी।

इस बीच जब सुरेश किसी प्रांत के एक बड़े शहर में रह रहे थे, तब एला भी उनके घर रहने लगी। उसके रूप, गुण और उसकी विद्या ने उसके चाचा के मन में गर्व भर दिया। वे अपने अफसरों और सहकर्मियों तथा देशी-विदेशी मिलने-जुलनेवालों के आगे एला को प्रकट करने के लिए व्यग्र हो उठे। लेकिन एला की स्त्री-बुद्धि इस बात को जल्दी ही ताड़ गई कि इसका फल अच्छा नहीं हो रहा है। माधवी झूठ-मूठ ही आराम का बहाना बनाकर अक्सर कहने लगी, 'चलो, मेरी तो जान बची—विलायती सामाजिकता का बोझ बेकार ही मुझ पर क्यों लादा जाए! न तो मुझमें उतनी विद्या है और न उतनी बुद्धि!'

यह सारा रंग-ढंग देखकर एला ने अपने चारों ओर एक तरह के जनानखाने का वातारण खड़ा कर लिया। सुरेश की लड़की सुरमा को पढ़ाने का भार उसने बहुत उत्साह के साथ अपने ऊपर ले लिया। और बाकी जो समय बचा था उसे उसने एक थीसिस तैयार करने में लगा दिया। थीसिस का विषय था—बंगला मंगल काव्य और चासर के अंग्रेजी काव्य की तुलना। इस विषय के चुनाव पर सुरेश भी बहुत उत्साहित हुए। अब इस समाचार का उन्होंने चारों ओर प्रचार करना शुरू किया। लेकिन माधवी ने मुँह बनाकर कहा, 'अति अच्छी नहीं होती!'

फिर उसने अपने पति से कहा, 'तुमने फौरन अपनी लड़की को एला

से पढ़वाना शुरू कर दिया! क्यों? आखिर हमारे अधर मास्टर ने क्या अपराध किया था? भई, तुम कुछ भी कहो, लेकिन मैं तो—'

सुरेश दंग रह गए, बोले, 'यह क्या कह रही हो तुम? एला के साथ मास्टर की तुलना!'

'दो-चार नोट्स की किताबें रटकर पढ़ लेने भर से ही विद्या नहीं आ जाती!' यह कहकर माधवी गर्दन टेढ़ी करके कमरे से चली गई।

वह एक बात अपने पति से कहना चाहती थी, लेकिन वह ओठों तक आकर रुक जाती थी—सुरमा की उम्र तेरह पार हो चुकी है। आज नहीं तो कल उसके लिए लड़का ढूँढ़ने के लिए इधर-उधर दौड़-धूप करनी होगी और ऐसे समय अगर एला उसके साथ रहेगी तो...। आज-कल के लड़कों की आँखों पर तो फीके रंग का नशा रहता है। भला वे क्या जानें कि सुंदरता किसे कहते हैं? और फिर वह गहरी साँस लेकर सोचती कि इन सारी बातों को पति से कहना ही बेकार है—घर-गिरस्ती के मामलों में पुरुष अंधे ही होते हैं।

और माधवी इस कोशिश में लग गई कि जितनी जल्दी हो सके, एला का ब्याह हो जाए। उसे ज्यादा कोशिश भी नहीं करनी पड़ी। अच्छे-अच्छे लड़के अपने आप आने लगे, ऐसे लड़के कि उनके साथ सुरमा की सगाई करने के लिए माधवी का मन ललचाने लगा। इधर एला थी कि उन सब को निराश करके विदा कर देती थी।

अपनी भतीजी की इस हठपूर्ण नासमझी से सुरेश कुछ उद्विग्न हो उठे और माधवी के लिए भी यह असह्य हो उठा। वे जानती हैं कि पूरी उम्र की लड़की के लिए योग्य वर की उपेक्षा करना अपराध है। वे उम्र के अनुसार अनेक प्रकार की दुर्घटनाओं की आशंका करने लगीं, और इसमें अपनी जिम्मेदारी को सोचकर उनका हृदय व्यथित होने लगा। एला यह अच्छी तरह समझ गई कि अब वह अपने प्रति अपने चाचा के स्नेह के कारण उनकी गृहस्थी में द्वंद्व कराना चाहती है।

ठीक इसी समय इंद्रनाथ उस शहर में आ पहुँचे। अपने प्रदेश का विद्यार्थी-समाज उन्हें चक्रवर्ती राजा की भाँति मानता था। उनमें असाधारण तेज था और उनकी विद्या की ख्याति भी खूब थी। एक दिन सुरेश के घर उनका निमंत्रण था। उस दिन मौका देखकर एला ने कोई परिचय न होने पर

भी बिना किसी संकोच के उनके पास आकर कहा, 'क्या आप मुझे अपना कोई काम नहीं दे सकते?'

आजकल का समय देखकर इस तरह का आवेदन कोई आश्चर्य की बात नहीं, लेकिन फिर भी इस लड़की की दीप्ति देखकर वे चौंक पड़े। बोले, 'कलकत्ते में अभी हाल में ही लड़कियों के लिए एक 'नारायणी हाई स्कूल' खोला गया है। तुम्हें उसके संचालन का भार दे सकता हूँ। बोलो, तैयार हो?'

'तैयार हूँ, अगर आप मुझ पर विश्वास करें।'

इंद्रनाथ ने एला के चेहरे को गौर से देखते हुए कहा, 'मैं आदमी पहचानता हूँ। तुम पर विश्वास करने में मुझे एक क्षण की भी देर नहीं लगी। मैं तुम्हें देखते ही समझ गया कि तुम नवयुग की दूत हो, नवयुग का आह्वान है तुममें।'

सहसा इंद्रनाथ के मुँह से अपने बारे में यह सब सुनकर एला का मन भर आया।

वह बोली, 'आपकी बात से तो मुझे डर लगता है। आप इस तरह गलती से मुझे इतना ऊँचा न चढ़ाइए। आपकी धारणा के योग्य बनने की चेष्टा करूँगी तो मैं टूट ही जाऊँगी। अपनी शांति की सीमा के भीतर जहाँ तक हो सकेगा मैं आपके आदर्श की रक्षा करती रहूँगी, लेकिन मैं अपने को वैसा मान नहीं सकूँगी।'

इंद्रनाथ ने कहा, 'तुम गृहस्थी के बंधन में कभी नहीं बँधोगी, यह प्रतिज्ञा तुम्हें करनी होगी। तुम समाज की नहीं हो, तुम तो देश की हो।'

एला ने सिर उठाकर कहा, 'यही मेरी प्रतिज्ञा है!'

चाचा ने एला को जाने के लिए दृढ़ देखकर कहा, 'बेटी, अब मैं कभी तुझसे ब्याह के लिए नहीं कहूँगा, तू मेरे पास ही रह। यहीं रहकर मोहल्ले की लड़कियों का एक छोटा-मोटा क्लास लेने में क्या हर्ज है?'

लेकिन माधवी ने अपने स्नेहार्द्र पति की इस नासमझी से अप्रसन्न होकर कहा, 'अब वह बड़ी हो गई है और अपनी जिम्मेदारी खुद सँभालना चाहती है। यह तो अच्छी ही बात है। तुम क्यों बीच में रुकावट डालते हो? तुम अपने मन में चाहे जो समझो, मैं तो अब उसकी फिकर ज्यादा नहीं रख सकती!'

एला ने दृढ़ता के साथ कहा, 'मुझे काम मिल गया है, मैं तो काम करने

जाऊँगी!'

और एला काम करने चली गई।

इस भूमिका के बाद पाँच वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, अब कहानी बहुत दूर पहुँच चुकी है।

1

दृश्य—चाय की दूकान। पास ही एक छोटा-सा कमरा है। इस कमरे में बिक्री के लिए स्कूल-कॉलेज की कुछ पाठ्य-पुस्तकें सजी हैं, जिनमें से अधिकांश पुरानी हैं। इनमें से कुछ हैं आधुनिक यूरोपीय कहानियों और नाटकों के अनुवाद। गरीब घर के लड़के उनके पन्ने उलटकर चले जाते हैं। दूकानदार इस पर कोई आपत्ति नहीं करता। इस दूकान के मालिक हैं कानाई गुप्त, जो पुलिस के पुराने पेंशनयाफ्ता सब-इंसपेक्टर हैं।

सामने सदर रास्ता है, और बाईं ओर पास से ही एक गली चली गई है। जो लोग एकांत में चाय पीना चाहते हैं उनके लिए उसी कमरे में एक ओर एक फटे-पुराने टाट का पर्दा लगाकर अलग बैठने की व्यवस्था कर दी गई है। आज दूकान के इसी कोने में किसी विशेष आयोजन के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। स्टूल वगैरह की कमी दूर करने के लिए दार्जिलिंग चाय कंम्पनी के छापेदार डिब्बे रख दिए गए हैं। चाय के बर्तनों में भी अनिवार्य रूप से असमानता दिखाई दे रही है। उनमें से कुछ तो चीनी के हैं और कुछ नीले रंग के एनामेल के। टेबुल पर हैंडिल टूटे हुए दूध के एक जग में फूलों का गुलदस्ता लगा है। दिन के लगभग तीन बज रहे होंगे। लड़कों ने एलालता को निमंत्रण का समय दिया था ठीक ढाई बजे। कहा था कि एक मिनट भी देर से आवेंगी तो काम नहीं चलेगा। निमंत्रण बेवक्त दिया गया था, क्योंकि उसी समय दूकान सूनी रहती है। चाय पीनेवालों की भीड़ लगती है साढ़े चार बजे के बाद। एला ठीक समय पर ही आ गई थी, लेकिन लड़कों में से एक

का भी पता नहीं था। इसीलिए अकेली बैठी वह सोच रही थी कि कहीं उसने तारीख सुनने में गलती तो नहीं कर दी। इतने में इंद्रनाथ को वहाँ घुसते देखकर वह चौंक पड़ी। इस जगह वे भी आ सकते हैं, इसकी आशा किसी तरह नहीं की जा सकती।

इंद्रनाथ ने यूरोप में बहुत दिन बिताए हैं और विज्ञान में उन्होंने बहुत ख्याति प्राप्त की है। काफी ऊँचे पद पर पहुँचने का उन्हें अधिकार था, यूरोपीय शिक्षकों द्वारा उदारतापूर्वक लिखे गए कई प्रशंसा-पत्र उनके पास थे। लेकिन यूरोप में रहते हुए एक बार उनकी मुलाकात एक बदनाम भारतीय राजनीतिक नेता से हो गई और इसका नतीजा यह हुआ कि अपने देश में आते ही उनका काम अटकने लगा। अंत में इंग्लैंड के किसी प्रसिद्ध विज्ञानाचार्य की खास सिफारिश से उन्हें अध्यापकी का काम मिला भी तो वह अपने से अयोग्य एक अधिकारी के नीचे। अयोग्यता के साथ ईर्ष्या भी बहुत होती है, इसलिए उनकी वैज्ञानिक गतिविधियों में अधिकारियों की ओर से पग-पग पर बाधा खड़ी की जाने लगी और अंत में उनका तबादला एक ऐसी जगह कर दिया गया जहाँ लेबोरेटरी (प्रयोगशाला) तक नहीं थी। उन्होंने समझ लिया कि इस देश में उनके लिए अपने जीवन के सर्वोच्च अध्यवसाय का मार्ग बंद है। लेकिन वे अपनी दुर्गति की इस आशंका को किसी प्रकार भी स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे कि जिंदगी भर अध्यापन का चिर-अभ्यस्त चक्र चलाते हुए अंत में थोड़ी-सी पेंशन के सहारे जीवनयापन करें। इतना वे निश्चित रूप से जानते थे कि किसी दूसरे देश में सम्मान प्राप्त करने की उनमें काफी शक्ति थी।

एक दिन इंद्रनाथ ने जर्मन और फ्रेंच भाषा सिखाने की एक प्राइवेट क्लास खोल ली और साथ ही बोटेनी और जियोलॉजी आदि विषयों के अध्ययन में कॉलेज के विद्यार्थियों को सहायता देना भी शुरू किया। धीरे-धीरे इस छोटे से अनुष्ठान के बहाने एक अप्रकाश्य साधना की जड़ें गुप्त रूप से जेलखानों के आँगन से लेकर दूर-दूर तक फैलने लगीं।

इंद्रनाथ ने पूछा, 'एला, तुम यहाँ?'

एला बोली, 'आपने उन लोगों को मेरे घर जाने की मनाही कर दी, इसलिए उन्होंने मुझे यहाँ बुलाया है।'

'मुझे इसकी खबर बहुत पहले ही मिल गई थी। खबर मिलते ही मैंने

उन लोगों को अन्यत्र एक जरूरी काम में लगा दिया। उन लोगों की तरफ से मैं क्षमा माँगने आया हूँ। बिल भी मैं ही चुका दूँगा।'

'तो क्यों आपने मेरा निमंत्रण बिगाड़ दिया?'

'इस बात को छिपा देने के लिए कि उन लड़कों के साथ तुम्हारा सहृदयता का संबंध है। कल देख लेना—मैंने तुम्हारे नाम से एक लेख भी अखबार में छपने के लिए भेज दिया है।'

'आपने लिखा है? लेकिन आपकी लेखनी से निकली चीज सिर्फ नकली नाम के कारण किसी से छिप नहीं सकेगी। लोग उस पर विश्वास नहीं करेंगे।'

'मैंने बाँए हाथ से कच्ची लिखावट में लिखी है, और उसमें बुद्धि का परिचय भी नहीं है, केवल सदुपदेश भर है।'

'कैसा सदुपदेश?'

'तुम्हारे नाम से लिखा है, आज के लड़के अकाल जागरण द्वारा देश का सर्वनाश किए डाल रहे हैं। लेख में नारी-समाज से बहुत करुण ढंग से अपील की गई है कि वे इन अभागों का दिमाग ठंडा करें। आगे लिखा है कि केवल दूर से इनका तिरस्कार करने से उनके कानों तक अपनी आवाज पहुँचाना संभव नहीं है, इसलिए उनके बीच जाना होगा, उनके अड्डों में जाकर उनका नशा उतारना होगा। अधिकारियों को संदेह हो सकता है, सो होने दो। मैं माँ जाति की हूँ, उनका दंड स्वयं अंगीकार करके भी अगर मैं उनकी रक्षा कर सकी तो मेरे लिए वह मरण भी सार्थक होगा। आज कल हम नारियाँ अक्सर कहा करती हैं कि हम मातृजाति की हैं—वगैरह-वगैरह। यह सब बातें मैंने जैसे आँसुओं में भिगोकर लेख में रख दी हैं। मातृ-वत्सल पाठकों की आँखों में आँसू आ जाएँगे। अगर तुम पुरुष होतीं तो इसके बाद तुम्हारे लिए रायबहादुर का खिताब मिलना मुश्किल न रह जाता।'

'आपने जो कुछ लिखा है, वह बिलकुल ही मेरी बात नहीं हो सकती, ऐसा तो मैं नहीं कहूँगी, लेकिन इन शैतान लड़कों पर मेरा स्नेह है। ऐसे लड़के मिलेंगे कहाँ? एक दिन उनके साथ मैं कॉलेज में पढ़ी हूँ। पहले-पहल वे मेरे नाम से बोर्ड पर बेकार की बातें लिखा करते थे, पीछे से 'छोटी इलायची' कहकर चिल्लाया करते थे और फिर भोले बनकर आसमान की ओर देखने लगते थे। फोर्थ इयर में मेरी एक सहेली पढ़ती थी इंद्राणी। उसे

वे लोग 'बड़ी इलायची' कहा करते थे। वह बेचारी देखने में कुछ लंबी थी और रंग भी उसका साफ नहीं था। इन सब छोटे-मोटे उपद्रवों से बहुत-सी लड़कियाँ नाराज हो जाया करती थीं, लेकिन मैं हमेशा लड़कों का ही पक्ष लिया करती थी मैं जानती थी कि तब हम लोग उनकी आँखों के लिए जरा नई थीं, इसका उन्हें अभ्यास नहीं था, इसीलिए उनका व्यवहार अशिष्ट होता था। कभी-कभी भद्दा भी हो जाता था, लेकिन वह स्वाभाविक नहीं था। जब उन लोगों को हमें देखने का अभ्यास हो गया तो उनका स्वर भी अपने आप स्वाभाविक हो गया। छोटी इलायची अब एला दीदी हो गई। बीच-बीच में किसी के स्वर में मधुरता भी झलकने लगी—और मधुरता आए क्यों नहीं? लेकिन मैं कभी उससे डरी नहीं। मैंने अपने अनुभव से देखा है कि लड़कों के साथ व्यवहार करना बहुत ही आसान है, बशर्ते कि लड़कियाँ ज्ञात या अज्ञात रूप से उनके साथ शिकार का खेल खेलने की कोशिश न करें। उसके बाद एक-एक को देखा कि उनमें जो सबसे अच्छे थे, जिनमें नीचता नहीं थी, जिनमें स्त्रियों के प्रति पुरुषोचित सम्मान का भाव था—'

'यानी जो कलकत्ते के रसिक लड़कों की तरह रस से सराबोर नहीं थे—'

'हाँ, वे ही मृत्यु से निर्भय होकर अपनी जान हथेली पर रखकर देश के काम में मगन रहने लगे। उनमें से लगभग सभी मेरी तरह थे। मैंने सोचा, अगर वे इस तरह अपना दान देने के लिए आगे बढ़ सकते हैं तो मैं घर के कोने में दुबकी रहकर जान बचाना नहीं चाहती। अब ज्यों-ज्यों दिन बीतते जा रहे हैं, हमारा उद्देश्य उद्देश्य न रहकर नशा बनता जा रहा है। हमारी काम करने की शक्ति बिना किसी सुर-ताल के बढ़ती जा रही है, विचार-शक्ति को पीछे छोड़कर यह अच्छा नहीं लगता। ऐसे-ऐसे अच्छे लड़कों को किस अंध शक्ति के आगे बलि चढ़ाया जा रहा है! मेरी तो छाती फटती है यह सब देखकर।'

'बेटी, यह जो धिक्कार की भावना है यही तो कुरुक्षेत्र की उपकरणिका है। अर्जुन के मन में भी तो क्षोभ उत्पन्न हुआ था। डॉक्टरी सीखते समय मैं मुर्दे चीरते-चीरते मारे घृणा के गश खा जाता था। लेकिन वह घृणा ही घृणा के योग्य है। शक्ति के आरंभ में तो निष्ठुरता की ही साधना है, उसके अंत में शायद क्षमा का स्थान हो। तुम लोग कहा करती हो कि स्त्रियाँ माँ जाति की हैं। यह कोई गौरव की बात नहीं है। माँ तो स्वयं प्रकृति के हाथ से बनी

हुई है। जंतु-जानवर भी उससे बच नहीं पाए हैं। लेकिन उससे भी बड़ी बात यह है कि तुम शक्ति रूपिणी हो। दया-माया के दलदल को पार करके इसी बात को प्रमाणित करना होगा। शक्ति दो, पुरुषों को शक्ति दो?'

'ये बड़ी-बड़ी बातें कहकर आप हम लोगों को बहका रहे हैं। हम जो कुछ असल में हैं, उससे ज्यादा का दावा आप कर रहे हैं। इतना सहन न हो सकेगा।'

'दावे के जोर से दावा सत्य होता है। तुम लोगों को हम जैसा मानते रहेंगे, तुम वैसी होती चलोगी। तुम लोग भी उसी तरह हम पर विश्वास करो, ताकि हमारी साधना सत्य सिद्ध हो।'

'आपसे कुछ सुनना बहुत अच्छा लगता है, लेकिन अभी नहीं। अभी तो मैं खुद कुछ कहना चाहती हूँ।'

'अच्छा! तो यहाँ नहीं, चलो, उस पीछेवाले कमरे में चलो।'

वे परदे के पीछे उस अँधेरे-से कमरे में चले गए। वहाँ एक पुरानी टेबुल पड़ी थी और उसके दोनों तरफ दो बेंचें रखी थीं। दीवाल पर एक बड़ा-सा भारतवर्ष का नक्शा टँगा था।

'आपने एक अन्याय किया है, यह बात बिना कहे मुझसे रहा नहीं जाता।'

इंद्रनाथ को इस तरह सिर्फ एला ही कह सकती थी। लेकिन उसके लिए भी यह सहज नहीं था, इसीलिए उसे अपने गले पर अस्वाभाविक जोर देना पड़ा।

इंद्रनाथ के लिए सिर्फ यह ही कहा जाए कि वे देखने में अच्छे हैं तो यह एक तरह से पूरी बात नहीं होगी। उनके चेहरे पर एक कठिन आकर्षण शक्ति है, ऐसा लगता है, जैसे उनके सुदूर अंत:करण में एक वज्र बँधा है, जिसका गर्जन सुनाई नहीं देता। लेकिन हाँ, उसकी दीप्ति कभी-कभी दिखाई दे जाती है। चेहरे पर एक मँजी हुई भद्रता है। कड़ी बात कहने में कोई हिचक नहीं है, लेकिन हँसकर कहते हैं। गले का स्वर गुस्से में ऊँचा नहीं होता, गुस्सा हँसी में प्रकट होता है। जितनी सफाई से मर्यादा की रक्षा हो सकती है, उतनी कभी भूलते नहीं, और न उसका अतिक्रमण ही करते हैं। सिर के बाल कम छटे हुए हैं, पर सँभाले बिना सिलसिला बिगड़ने का कोई डर नहीं। चेहरे का रंग बादामी है, ललाई लिए हुए। भौंहों के ऊपर

प्रशस्त ललाट है। दृष्टि में बुद्धि की तीक्ष्णता और ओठों पर अविचलित संकल्प और प्रभुत्व के गौरव की झलक। वे अत्यंत कठिन माँग ही पेश कर सकते हैं, क्योंकि जानते हैं कि यह दावा सहज में खारिज नहीं हो सकता। किसी को लगता है कि उनकी बुद्धि असाधारण है, और किसी को लगता है कि उनमें अलौकिक शक्ति है। इसके अलावा कोई उनमें सीमाहीन श्रद्धा रखता है तो कोई अकारण भय।

इंद्रनाथ ने मुस्कराते हुए कहा, 'कौन-सा अन्याय?'

'उमा को आपने ब्याह करने की आज्ञा दी, पर वह तो ब्याह नहीं करना चाहती।'

'कौन कहता है कि नहीं चाहती?'

'वह खुद ही कहती है।'

'हो सकता है कि वह ठीक न जानती हो या ठीक बताती ही न हो।'

'उसने आपके सामने प्रतिज्ञा की थी, ब्याह न करने की!'

'हाँ, तब उसकी बात सच थी, लेकिन अब वह सच नहीं रही। इस तरह मुँह से कुछ कह देने भर से ही सत्य की सृष्टि नहीं की जा सकती। अपनी प्रतिज्ञा तो उमा खुद ही तोड़ देती—मैंने तुड़वा दी, और इस प्रकार उसे अपराध से बचा दिया।'

'लेकिन प्रतिज्ञा पूरी न करने की जिम्मेदारी तो उसी की है, या तो वह उसे तोड़ती या अपराध करती।'

'हाँ, लेकिन तोड़ते-तोड़ते वह अपने आस-पास का भी बहुत कुछ तोड़-फोड़ डालती—इसमें हम सब का नुकसान होता।'

'लेकिन वह जो बहुत रो-पीट रही है, सो?'

'तो फिर रोने-पीटने के दिन और अधिक नहीं बढ़ने दूँगा—कल-परसों ही में उसका विवाह करा दिया जाएगा।'

'कल-परसों के बाद भी तो उसका सारा जीवन पड़ा हुआ है।'

'लड़कियों का ब्याह से पहले का रोना-पीटना सब 'प्रभाते मेघा-डंबरम्'-सा ही होता!'

'आप बड़े निष्ठुर हैं।'

'क्योंकि मनुष्य पर जिस विधता का स्नेह है, वह स्वयं ही निष्ठुर है; वह तो जानवर को ही प्रश्रय देता है।'

'आप जानते हैं, उमा सुकुमार से प्रेम करती है!'

'इसीलिए तो उसे उससे अलग करना चाहता हूँ।'

'प्रेम की सजा है यह?'

'प्रेम की सजा का तो कोई मतलब ही नहीं होता। यों तो चेचक का होना भी एक सजा है—लेकिन दाने फूट आने पर उसे घर से निकालकर अस्पताल भेज देना ही ठीक होता है।'

'सुकुमार के साथ विवाह हो जाए तो अच्छा रहे।'

'लेकिन सुकुमार ने तो कोई अपराध नहीं किया। उसके जैसे लड़के और हैं ही कितने?'

'वह अगर खुद ही उमा से विवाह के लिए राजी हो जाए तो?'

'कुछ असंभव नहीं। इसी से तो इतनी जल्दी करने की जरूरत हो आई है। उसके जैसे ऊँचे दर्जे के आदमी के मन में गड़बड़ पैदा कर देना लड़कियों के लिए बहुत आसान है। सुकुमार के सामने दो बूँद आँसू टपकाकर उसके सौजन्य को प्रथम सिद्ध किया जा सकता है। यह सुनकर नाराज हो रही हो?'

'नाराज क्यों होने लगी? मेरे अनुभव में ऐसी घटनाओं की कमी नहीं कि स्त्रियों के कौशल से बढ़ावा मिला है और फिर उसका दायित्व उठाना पड़ा है पुरुषों को। अब समय आ गया है, जब सत्य के अनुरोध से न्याय-अन्याय का विचार किया जाना चाहिए। मैं ऐसा ही करती हूँ, इसीलिए तो लड़कियाँ मुझे देख नहीं सकतीं। जिसके साथ उमा के विवाह की आज्ञा हुई है उस भोगीलाल का क्या मत है?'

'उस सीधे-साधे भलेमानस के मतामत की कोई झंझट नहीं। वह तो बंगाल की लड़की मात्र को विधाता की अपूर्व सृष्टि मानता है। ऐसे मुग्ध स्वभाव के लड़के को दल से अलग कर देना ही ठीक है। कूड़ा-करकट फेंकने की सबसे अच्छी टोकरी का नाम है ब्याह!'

'इन सारे उत्पातों की आशंका होते हुए भी आपने स्त्री-पुरुषों को इस तरह इकट्ठा क्यों किया है?'

'जिस संन्यासी ने शरीर पर भस्म रमाई है और जिस भस्म-कुंड ने प्रवृत्तियों को भस्म कर दिया है, उन नपुंसकों से हमारा काम नहीं चलेगा। इसलिए जब मैं देखूँगा कि अपने दल का कोई अग्नि-उपासक असावधानी

के कारण अपने ही अंदर आग लगाना चाहता है तो फौरन उसे हटा दूँगा। हमारी आग देश भर में व्याप्त है, बुझे हुए दिल से वह जल नहीं सकती, और उन लोगों के जरिए भी कुछ नहीं हो सकता जो आग को दबाना नहीं जानते।'

एला गंभीर चेहरा बनाए बैठी रही। कुछ देर बाद आँखें नीची करके वह बोली, 'तो मुझे आप छोड़ दीजिए।'

'इतना नुकसान करने को क्यों कह रही हो?'

'आप जानते नहीं।'

'जानता नहीं हूँ? कौन कहता है? मैंने देखा है कि तुम्हारी खादी की साड़ी में कुछ रंग आने लगा है। मैं समझ सकता हूँ कि किसी एक के पैरों की आहट की आशा में तुम्हारे कान बिछे रहते हैं। पिछले शुक्रवार को जब मैं तुम्हारे घर गया था तो तुमने सोचा था कि कोई और आया है। मैंने देखा कि मन को ठीक कर लेने में तुम्हें कुछ समय लगा। शरमाओ मत एला, इसमें कोई असंगत बात नहीं है।'

एला के कान सुर्ख हो गए। वह चुप बैठी रही।

इंद्रनाथ ने कहा, 'तुम किसी को प्यार करती हो, यही न? तुम्हारा मन तो जड़-पत्थर का नहीं बना है, जिससे प्रेम करती हो उसे भी जानता हूँ। पश्चात्ताप का कारण तो इसमें कुछ भी नहीं देखता।'

'आपने कहा था कि एकाग्र चित्त से काम करना होगा। किसी समय वैसा नहीं भी हो सकता है।'

'हाँ, हर कोई ऐसा नहीं कर सकता! लेकिन प्रेम के भार से तुम अपना व्रत डुबो दो, ऐसी लड़की तो तुम नहीं हो।'

'लेकिन—'

'इसमें लेकिन कुछ भी नहीं है—तुम तो किसी भी हालत में छुटकारा नहीं पा सकतीं।'

'मैं तो आप लोगों के किसी काम भी नहीं आती—यह तो आप जानते ही हैं।'

'तुमसे तो मैं काम नहीं चाहता। काम की सब बातें मैं तुम्हें बताता भी नहीं। लेकिन तुम्हें क्या मालूम कि तुम्हारे हाथ से लगा रक्त-चंदन का टीका लड़कों के मन में कैसी आग लगा देता है! उसे भुलाकर सिर्फ कोरी तनखाह पर काम कराने से तुमसे पूरा काम भी तो नहीं मिल सकता। हम कामिनी

और कांचन के त्यागी नहीं हैं। जहाँ कांचन का प्रभाव है, वहाँ कांचन की मैं अवज्ञा भी नहीं करता और जहाँ कामिनी का प्रभाव है वहाँ मैंने उसे वेदी पर बिठाया है।'

'आपसे झूठ नहीं बोलूँगी, लेकिन मुझे लगता है कि मेरा प्रेम दिनोदिन मेरे अन्य सभी लगावों को पीछे छोड़ता जा रहा है।'

'कोई भय नहीं, खूब प्रेम करो। केवल माँ! माँ के स्वर में जो लोग देश को पुकारते हैं वे चिर-शिशु ही रहेंगे। देश बूढ़े-बच्चों की माँ नहीं है, देश अर्ध-नारीश्वर हैं—स्त्री-पुरुष के मिलन में ही उसकी उपलब्धि है। इस मिलन को घर-गिरस्ती के पिंजड़े में बंद करके निस्तेज न करो।'

'लेकिन फिर आप उमा को—'

'उमा! का लू! वे तो प्रेम के शुष्क रुद्ररूप हैं। वे इसे कैसे सह सकेंगे? दांपत्य के जिस घाट पर उनकी सारी साधना का अंत्येष्टि-संस्कार होगा, समय रहते मैं उन दोनों को वहीं पहुँचाए दे रहा हूँ। खैर, छोड़ो इस चर्चा को। सुना है कि परसों रात तुम्हारे घर में कोई डाकू घुस आया था?'

'हाँ, घुसा तो था।'

'अपनी 'जुगुत्सु'—शिक्षा से कुछ फायदा उठाया तुमने?'

'मुझे तो लगता है कि मैंने उसकी कलाई ही तोड़ दी है।'

'मन में कुछ आह-ऊह नहीं हुआ?'

'होता तो, लेकिन मन में डर था कि कहीं यह मेरा कुछ अपमान न कर बैठे। अगर वह पीड़ा के कारण हार न मान लेता तो मैं आखिर तक उसका हाथ नहीं मरोड़ सकती थी।'

'पहचान पाई कि वह कौन था?'

'अँधेरे में कुछ दिखाई नहीं दिया।'

'अगर दिखाई देता तो पहचान लेती कि वह अनादि था।'

'अरे, यह क्या कह रहे हैं? अपना अनादि? वह तो अभी बच्चा ही है।'

'मैंने ही उसे भेजा था।'

'आपने ही? क्यों, ऐसा क्यों किया?'

'तुम्हारी भी परीक्षा हो गई और उसकी भी।'

'कैसे निष्ठुर हैं आप?'

'मैं नीचे के कमरे में ही था। उसी वक्त उसकी हड्डी ठीक कर दी। तुम

तो अपने को व्यथा-कातर समझती हो। मैंने समझाना चाहा था कि विपत्ति के सामने कातरता स्वाभाविक नहीं होती। उस दिन तुमसे कहा था कि बकरी के बच्चे को पिस्तौल से मार दो। लेकिन तुमने कहा कि मुझसे यह नहीं हो सकता। और तुम्हारी फूफेरी बहन ने बहादुरी से गोली मार दी थी। और जब उसने देखा कि वह धम से गिर पड़ा तो कठोरता व्यक्त करने के उद्देश्य से वह ठहाका मारकर हँस पड़ी थी। लेकिन वह तो जैसे हिस्टीरिया की हँसी थी, उसे उस रात नींद नहीं आई। लेकिन तुम्हें शेर भी खाने आता, और तुम अगर डरपोक न होती तो उसे उसी वक्त मार देती। तुम्हें इसके लिए जरा भी दुविधा न होती। हम लोग उसी शेर को अपने मन की आँखों के सामने हमेशा रखते हैं। इसीलिए हमने दया-माया को तिलांजलि दे दी है, वरना हम अपने को भावुक मान लेते और उससे केवल घृणा ही करते। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को यही बात समझाई थी। निर्दय नहीं होना चाहिए लेकिन कर्तव्य के समय निर्मम जरूर होना चाहिए। समझ गई न?'

'समझी।'

'अगर समझ गई हो तो एक प्रश्न करूँगा। तुम अतीन से प्रेम करती हो?'

एला ने कोई उत्तर नहीं दिया, चुप ही रही।

'अगर कभी वह हम सबको विपत्ति में डाल दे तो क्या तुम अपने हाथों उसका अंत नहीं कर सकती?'

'उनके लिए यह बात इतनी असंभव है कि हाँ कहने में भी मुझे हिचक नहीं।'

'मान लो अगर कभी संभव हो जाए?'

'मुँह से मैं चाहे जो कुछ कहूँ, लेकिन क्या अपने आपको मैं अंत तक पहचानती हूँ?'

'अपने आपको तो पहचानना ही होगा। हर तरह की भीषण संभावनाओं की कल्पना करके अपने को तैयार तो रखना ही होगा।'

'मैं निश्चित रूप से कहती हूँ, आपने मुझे गलत चुना है।'

'मैं निश्चित जानता हूँ कि मैंने गलती नहीं की है।'

'मास्टर साहब, आपके पाँव पड़ती हूँ, अतीन को मुक्ति दे दीजिए।'

'मैं मुक्ति देनेवाला कौन हूँ? वह तो अपने ही संकल्प के बंधन में है

और स्वयं जान-बूझकर बँधा है। उसके मन की दुविधा कभी मिट नहीं सकती। उसकी रुचि पर हर समय चोट पहुँचा करेगी, लेकिन उसका अपना आत्म-सम्मान उसे अंत तक ले जाएगा।'

'आदमी पहचानने में क्या आप कभी गलती नहीं करते?'

'करता हूँ। कई आदमी ऐसे हैं जिनके स्वभाव में दो तरह की बुनाई का काम रहता है। इन दोनों रूपों में कोई मेल नहीं रहता। फिर भी दोनों ही सत्य हैं। वे खुद भी अपने बारे में गलती कर जाते हैं।'

इतने में भारी गले से आवाज आई, 'कहिए, भाई साहब?'

'कौन, कानाई हो क्या?'

कानाई अंदर कमरे में आया। ठिगना, मोटा-सा आदमी है, लगभग बूढ़ा होने आया है। शायद दाढ़ी बनाने की फुरसत नहीं मिलती, सारा चेहरा खूँटियों से भरा है। माथे पर सामने के बाल उड़ गए हैं। धोती के ऊपर मोटी खादी की चद्दर है, जिस पर धोबी की कृपा कभी नहीं होती। कुरता है ही नहीं। दोनों हाथ उसके शरीर के नाप से कुछ छोटे मालूम होते हैं। लगता है, जैसे हमेशा वे काम करने के लिए तैयार हैं। दल के लोगों को यथासंभव खिला-पिलाकर संतुष्ट करने के लिए ही यह चाय की दुकान उसने चला रखी है।

कानाई ने अपने दबे और बैठे हुए गले से कहा, 'भैया, तुम तो अपने वाक्-संयम के लिए प्रसिद्ध हो, तुम्हें मुनि कहा जाए तो कुछ बुरा नहीं। लेकिन एला दीदी तुम्हारी उस प्रसिद्धि को मिटाकर ही दम लेंगी।'

इंद्रनाथ ने हँसते हुए कहा, 'बात न करने की ही तो साधना करते हैं हम लोग! लेकिन नियम की रक्षा करने के लिए व्यतिक्रम की भी जरूरत होती है। यह लड़की खुद बात नहीं करती, दूसरों को बोलने का मौका देती है— वाचा का बड़ा मूल्यवान आतिथ्य है यह!'

'क्या कहते हो? एला दीदी बात नहीं करतीं! इस समय तुम्हारे कारण चुप हैं, लेकिन जब मुँह खोलती हैं तब जैसे वाणी की बाढ़ ही आ जाती है। मैं तो जरा मोटी बुद्धि का आदमी हूँ, फिर भी आवाज सुनते ही अपना कागज-पत्र छोड़कर ओट से इनकी बातें सुनने के लिए चला आता हूँ। अब जरा मेरी बात सुनो। एला दीदी की तरह मेरा स्वर मधुर नहीं है, लेकिन संक्षेप में जो कुछ कहूँगा वह मर्म तक पहुँच जाएगा ऐसी आशा है।'

एला फौरन उठ खड़ी हुई।

इंद्रनाथ बोले, 'जाने के पहले एक बात साफ कर दूँ। अपने दल के लोगों के सामने मैं तुम्हारी निंदा किया करता हूँ। मैंने तो यहाँ तक कहा है कि संभव है शायद किसी दिन तुम्हें इस तरह हटा देना पड़े कि तुम्हारा निशान तक न बचे। मैंने कहा है कि अतीन को तुम बहका रही हो, और इस तरह उसके कारण बहुत कुछ प्रकट हो सकता है।'

'इस तरह कह-कहकर आप बात को सच क्यों बना देना चाहते हैं? क्या पता, इस जगह से कभी मेरा कुछ असामंजस्य हो जाए।'

'अगर ऐसा हो जाता तो भी मैं तुम पर कोई संदेह न करता। लेकिन फिर भी उन लोगों के सामने मैं तुम्हारी निंदा किया करता हूँ। यह प्रसिद्ध है कि तुम्हारा कोई शत्रु नहीं है, लेकिन मैं ही देखता हूँ कि हमारे अनुरक्तों में से लगभग सभी कम-से-कम बारह आने तो उस निंदा पर विश्वास करने के लिए तैयार हो ही जाते हैं। ये निंदाविलासी लोग बड़े निष्ठाहीन हैं। ऐसे लोगों का नाम मैं दर्ज कर लेता हूँ—बहुत-से पन्ने भर गए हैं।'

'मास्टर साहब, उन्हें निंदा से प्रेम है, इसलिए वे निंदा करते हैं, मुझसे अप्रसन्न होने के कारण नहीं।'

'अजातशत्रु नाम तो सुना है एला? ये सभी जातशत्रु हैं। जन्म काल से ही आरंभ होनेवाली इनकी यह अकारण शत्रुता बंगाल के विकास की सारी चेष्टाओं को बराबर धूल में मिलाती आ रही है।'

'भाई साहब, आज यहीं तक, शेष विषय को आगामी अंक में समाप्य रहने दो! एला दीदी, आज तुम्हारे इस चाय के निमंत्रण को भंग कराने में मेरा भी थोड़ा-सा हाथ हो तो कुछ ख्याल न करना। मेरी दूकान पर अब ताला पड़ने का समय आ लगा है। अब शायद सौ-दो सौ कोस दूर जाकर कहीं नाई की दूकान न खोलनी पड़े! इस बीच मैंने 'अलकानंद' तेल के पाँच पीपे तैयार करा लिए हैं। इसे महादेव की जटा निचोड़कर निकाला गया है। तुम तो बेटी, मुझे एक सिफारिशी सर्टीफिकेट दे देना कि इनका तेल लगाने के बाद से जूड़ा बाँधना एक आफत हो गई है, वेणी इतनी लंबी हो गई है कि इसे सँभाल पाना स्वयं दशभुजा देवी के बूते के भी बाहर की बात है।'

जाने के समय एला दरवाजे के पास आकर घूमकर बोली, 'मास्टर साहब, आपकी बात याद रहेगी, मैं तैयार रहूँगी। मुझे हटाने का दिन भी

शायद आ जाए, तो मैं चुपचाप कहीं बिला जाऊँगी।'

एला के चले जाने के बाद इंद्रनाथ ने कहा, 'कानाई, आज तुम्हें इतना चंचल क्यों देख रहा हूँ?'

'अभी-अभी सड़क के किनारे मेरी उस सामनेवाली टेबुल पर तीन-चार बदमाश लड़के बैठे वीररस का प्रचार कर रहे थे। बातचीत से लगता था जैसे साँड़ के पोते ही हों। मैंने सेडिशन का चार्ज लगाकर थाने में उनके नाम रिपोर्ट कर दी।'

'तुमने समझने में गलती तो नहीं की, कानाई?'

'गलती से संदेह करना अच्छा, लेकिन संदेह न करने की गलती करना घातक है। अगर वे निरे मूर्ख ही हुए तो उन्हें कोई नहीं बचा सकता और अगर असल दुश्मन हुए तो उन्हें कौन मार सकता है? मेरी रिपोर्ट से अच्छा ही होगा। वे सब शैतान मिलकर जोर-शोर से ब्रिटिश शासन को रक्त-गंगा में डुबो देने का प्रस्ताव रख रहे थे। एक दिन की बात है मैं शाम को कैशबाक्स लेकर हिसाब मिलाने बैठा था कि इतने में एक लड़का अंदर आया और चुपके से बोला कि पचीस रुपए चाहिए, दिनाजपुर जाना है। उसने अपने माथुर मामा का नाम भी लिया। मैं फौरन उछल पड़ा और चिल्लाया—भाग शैतान यहाँ से! तेरी यह हिम्मत! अभी पुलिस बुलाता हूँ। मेरे पास उस समय वक्त नहीं था, नहीं तो सचमुच ही उसे थाने में ले जाता और सारा मजाक भुला देता। तुम्हारे साथ के जो लड़के बगल के कमरे में बैठे चाय पी रहे थे मुझ पर आग बबूला हो उठे और उन्होंने उसे देने के लिए चंदा उगाहना शुरू कर दिया। सब की जेब से बटोरने पर भी जब देखा कि तेरह आने से ज्यादा का फंड नहीं इकट्ठा हो सका, तो वह लड़का मेरा चेहरा देखकर वहाँ से भागता ही बना!'

'तब तो लगता है कि तुम्हारे ढक्कन के छेद से गंध निकलने लगी, और मक्खियों की आमदरफ्त शुरू हो गई है।'

'हाँ, इसमें कोई शक नहीं। भैया, तुम अभी से अपने चेलों को इधर-उधर फैला दो—देखना, उनमें से कोई भी बेकार न रहने पाए। सबके पास अपनी जीविका का प्रत्यक्ष साधन होना चाहिए।'

'हाँ, चाहिए तो निश्चय ही, लेकिन। इसका कोई उपाय भी कुछ सोचा है?'

‘हाँ, बहुत दिनों से सोच रखा है। लेकिन मेरा हाथ खाली नहीं था, इसलिए कुछ कर नहीं सका। सोच भी रखा है और साधन भी बहुत से इकट्ठे कर रखे हैं। माधव कविराज ‘ज्वराशनि वटिका’ नाम की दवा बेचते हैं, उसमें बारह आने कुनैन मिली रहती है। बस, वही लेकर उसका लेबिल बदल दूँगा और नाम रख दूँगा ‘मलेरियारि गुटिका।’ कुनैन के साथ और भी कई बातें जोड़ दूँगा। प्रतुल सेन को एक कैनवेस के बेग में दवा भरकर उसके प्रचार के काम में लगा दिया जाएगा। और तुम्हारे निवारण बेटा को अव्वल दर्जे की एम.एस.सी. की डिग्री की लाज त्यागकर ‘भैरवी-कवच’ के प्रचार का काम सौंप दिया जाएगा। इस कवच में सप्तधातु के अलावा और भी कई नई धातुओं के नाम जोड़कर प्राचीन ऋषियों और आधुनिक विज्ञान का एक अभूतपूर्व मिश्रण दुनिया के सामने पेश किया जाएगा। जगबंधु संस्कृत श्लोकों और अपने व्याकरण-ज्ञान का जादू दिखाकर चिल्ला-चिल्लाकर यह प्रमाणित करता रहेगा कि चाणक्य बंगाल में ही नेत्रकोना नामक स्थान में जन्मे थे। उसी सब-डिवीजन में मेरा भी जन्म हुआ है। इस विषय को लेकर साहित्य-क्षेत्र में भयंकर खंडन-मंडन चलेगा, और फिर अंत में मेरे ही परदादा के गिरे-पड़े मकान में चाणक्य-जयंती मनाई जाएगी। और तुम्हारा डॉक्टर तारिणी सांडेल शीतला माता के मंदिर के लिए चंदा माँग-माँग कर मुहल्लेवालों की नींद हराम करता रहेगा। असल में बात यह है कि तुम्हारे गर्वीले बहादुरों को कुछ दिनों के लिए बेकार के रोजगारों में अपने आपको फँसा लेना होगा—ताकि कोई उन्हें मूर्ख कहता रहे और कोई चतुर व्यवसायी।’

इंद्रनाथ ने कहा, ‘तुम्हारी बात सुनकर मेरा भी मन होता है कि किसी रोजगार में लग जाऊँ। और कुछ नहीं तो दिवालिया होने की रीति और साइकॉलॉजी का अध्ययन करने के उद्देश्य से ही सही।’

कानाई बोला, ‘भैया, तुम जिस रोजगार में लगे हो उसका, आज नहीं तो कल सही, दिवाला तो निकलेगा ही। जो लोग दिवालिया होते हैं वे इसलिए नहीं होते कि कुछ जानते ही नहीं। असल में वे नुकसान के रास्ते को किसी भी प्रकार छोड़ नहीं पाते, इसीलिए दिवालिया होते हैं। दिवालिया होने का भी एक प्रकार का आध्यात्मिक आकर्षण है। फिलहाल इन सब की आलोचना से कोई लाभ नहीं। एक प्रश्न मन में उठता है, तुमसे पूछ लूँ। एला

जैसी सुंदरी आमतौर से देखने में नहीं आती—इसे तुम मानते हो या नहीं?'

'मानता क्यों नहीं?'

'तो फिर तुमने उसे अपने दल में किसलिए रखा है?'

'कानाई, इतने दिनों में तो तुम्हें समझ लेना चाहिए था। आग से जो आदमी डरता है वह आग का प्रयोग नहीं कर सकता। अपने काम से मैं आग को अलग नहीं रख सकता।'

'यानी उससे काम बिगड़े या बने—तुम्हें इसकी परवाह नहीं।'

'सृष्टिकर्ता आग से खेला करता है। सृष्टि का काम निश्चित फल का हिसाब लगाकर नहीं चलाया जा सकता। उसका यह विराट् प्रवर्तन तो अनिश्चित की प्रत्याशा से ही है। ठंडा माल-मसाला लेकर और अँगूठे से दाब-दाबकर जो खिलौने बनाए जाते हैं, उनके बाजार भाव का हिसाब लगाकर अपना काम चलाने की मुझे इच्छा नहीं है। यह जो अतीन नाम का लड़का एला के आकर्षण से अपने बीच आया है, उसके अंदर कुछ कर डालने का 'डाइनामाइट' मौजूद है। इसीलिए उसके प्रति मुझे इतनी उत्सुकता है।'

'भैया, तुम्हारी इस भीषण लेबोरेटरी में हम लोग तो जैसे झाड़न कंधे पर डालकर बेयरे का काम भर करते हैं। अगर कहीं कोई गैस या मशीन वगैरह टूट-फूटकर चिटक पड़ी तो हमारी तो खोपड़ी ही उड़ जाएगी। इस स्थिति पर गर्व करने का जोर हममें नहीं है।'

'तो जवाब देकर विदा क्यों नहीं ले लेते?'

'फल का लोभ जो है हम लोगों में। तुममें न हो, यह अलग बात है। तुम्हारे ही दलाल से एक दिन सुना था कि यहाँ शायद कभी जीवनामृत प्राप्त हो सके। तुम्हारे इस सत्यानाशी रिसर्च के चक्कर में हम गरीब जो आ फँसे हैं वह आशा के आकर्षण के कारण ही, अनिश्चय कोहरे के कारण नहीं। तुम शायद इसे जुआरी की नशीली आँखों से देख रहे हो और हम लोग तो इसे रोजगार की नजर से ही देखते हैं। कहीं अंत में बही-खाते में आग लगाकर हम लोगों से मजाक न कर बैठा, भैया! इसकी पाई-पाई में हम लोगों का खून है।'

'मेरे मन में किसी तरह का अंधविश्वास नहीं है, कानाई। मैंने हार-जीत के बारे में तो सोचना ही छोड़ दिया है। मैं तो कर्म के विशाल क्षेत्र का

कार्यकर्ता हूँ, और यहीं मैं अच्छा भी लगता हूँ। यहाँ हार भी बड़ी है और जीत भी बड़ी है। उन लोगों ने चारों ओर के द्वार बंद करके मुझे छोटा करना चाहा था। लेकिन मरने के पहले तक मैं साबित कर देना चाहता हूँ कि मैं बड़ा हूँ। मेरी पुकार सुनकर एक से एक बढ़कर आदमी मृत्यु की अवज्ञा करके चारों ओर आ जुटे हैं। इसे तो तुम देख ही रहे हो, कानाई! यह सब क्यों? इसीलिए न कि मैं पुकार सकता हूँ। इस बात को मैं अच्छी तरह जानकर और दूसरों को जताकर ही जाऊँगा। फिर जो होना होगा सो होगा। तुम भी तो बाहर से देखने में किसी दिन साधारण से ही थे, लेकिन तुम्हारी असाधारणता को मैंने ही प्रकाशित किया। तुम लोगों को मैंने रस में डुबो दिया है। मनुष्यों के साथ मेरी यही रसायन साधना है। इससे ज्यादा और क्या चाहिए? ऐतिहासिक महाकाव्य की समाप्ति पराजय के महाश्मसान में भी हो सकती है। लेकिन है तो महाकाव्य ही! गुलामी से दबे इस देश में अच्छी मौत मर सकना भी एक सुयोग ही है।'

'भैया, मुझ जैसे अकल्पनाशील व्यावहारिक आदमी को भी तुम इस पागलपन के तांडव-नृत्य में खींच लाए। जब मैं सोचता हूँ तो इस रहस्य का अंत ही नहीं समझ पाता।'

'मैं कंगालों की तरह कभी तुम लोगों से कुछ नहीं माँगता, इसीलिए तुम लोगों पर मेरा इतना जोर है। न मैंने माया से बहकाकर और न लोभ दिखाकर ही किसी को बुलाया है। मैं तो असाध्य के बीच पुकारता हूँ, फल के लिए नहीं, बल्कि बल-वीर्य प्रमाणित करने के लिए। मेरा स्वभाव ही अवैयक्तिक है। जो कुछ अनिवार्य है उसे मैं अक्षुण्ण मन से स्वीकार कर सकता हूँ। इतिहास मैंने पढ़ा है और देखा है कि कितने बड़े-बड़े साम्राज्य गौरव के गगनचुंबी शिखर पर पहुँचे थे और फिर धूल में मिल गए—शायद उनके हिसाब के खाते में कहीं कोई भारी ऋण जमा हो रहा था, जिसे वे चुका नहीं पाए। और चूँकि यह देश मेरा देश है केवल इतने से ही मेरे सौभाग्य को यह हमेशा बनाए रख सकेगा और उसके साथ इतिहास की गद्दी पर भी विराजमान रहेगा तथा पराभव के सारे कारणों पर सिंदूर-चंदन लगाकर उनकी पूजा करता रहेगा—ऐसा दावा भला एक मूर्ख की भाँति मैं क्यों करूँ? बताओ? मैं तो ऐसा नहीं कर सकता। वैज्ञानिक के निर्मोही मन से तो मैं मान लेता हूँ कि जिसकी मरण-दशा आ पहुँची है, वह मरेगा ही।'

'तब ?'

'तब ! देश की चरम दुरावस्था मेरा सिर नीचा नहीं कर सकती। मैं उससे भी ऊँचा हूँ। मैं अपनी आत्मा में अवसाद नहीं आने दूँगा—मरण के सारे लक्षण देखकर भी नहीं आने दूँगा।'

'और हम लोग ?'

'क्यों ? तुम लोग क्या छोटे बच्चे हो। बीच सागर में जिस जहाज का पेंदा सात जगह से फट गया हो, क्या पीटकर और मंत्र पढ़कर और विधाता की दुहाई देकर तुम उसे बचा सकते हो ?'

'अगर नहीं बचा सके तो ?'

'तो क्या हुआ ? तुम अनेक जनों ने जानबूझकर तूफान के आगे उस डूबते हुए जहाज पर पाल तान दिया है, और ऐसा करते समय तुममें से किसी का भी कलेजा नहीं काँपा ! ऐसे जितने लोग मिले हैं, उनके साथ ही हमें जीत हासिल करनी है। जो देश रसातल को जाने के लिए अंधे की तरह तैयार है, उसी के मस्तूल पर तुम लोग जय-पताका फहरा रहे हो—इसमें तुम लोगों ने न तो झूठी उम्मीद बाँधी है, न कंगालपन दिखाया है और न छाती पीटकर निराशा से तुम रोए हो। तुम लोगों ने तब भी पतवार नहीं छोड़ी, जबकि जहाज का पेंदा पानी से भर गया ! बस, पतवार छोड़ने में ही कायरता है। तुम जितने भी मुझे मिल पाए हो, मेरा काम तो उन्हीं से चल जाएगा। इसके बाद ? कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन् !'

'तुम्हारे कहने में एक खास बात छूटी जा रही है, ऐसा लगता है।'

'कौन-सी बात ?

'क्या तुम्हारे मन में क्रोध भी नहीं है ? इतने 'इम्पर्सनल' हो तुम ?'

'किस पर क्रोध ?'

'अंग्रेजों पर ?'

'जो आदमी शराब पीकर आँखें लाल किए बिना लड़ ही नहीं सकता, ऐसे गँवार की मैं उपेक्षा करता हूँ। क्रोध में आकर कर्तव्य करने से अकर्तव्य होने की ही अधिक संभावना रहती है !'

'यह सब ठीक है, लेकिन क्रोध का कारण मौजूद हो और फिर भी क्रोध न किया जाए, यह अस्वाभाविक है।'

'मैं यूरोप से परिचित हूँ, अंग्रेजों को भी जानता हूँ। जितनी भी पश्चिमी

जातियाँ हैं उनमें यह जाति सबसे बड़ी है। शत्रु की ताड़ना से उत्तेजित होकर वे मार नहीं सकते, ऐसी बात नहीं है—वे पूरी तौर से मार नहीं पाते, शरमाते हैं। उनके अपने बीच जो बड़े हैं, उन्हीं के सामने उत्तरदाई हो जाने से वे बहुत डरते हैं। वे अपने को भी भुलावा देते हैं और उन्हें भी। उन पर 'फुल स्टीम' में क्रोध करना मुझसे संभव नहीं।'

'विचित्र हो तुम!'

'सोलह आना चोट पहुँचा कर वे हमेशा के लिए हमारी रीढ़ तोड़ सकते थे। लेकिन वे ऐसा नहीं कर सके। मैं उनकी इंसानियत को शाबाशी दूँगा। पराए देश में राज करते-करते उनकी वह इंसानियत कम होती रहती है—इसी से उनमें मृत्यु की स्थिति आती जा रही है। पराए देशों का इतना बड़ा बोझ और किसी जाति के सिर नहीं है, इसीलिए उन लोगों का स्वभाव अब बिगड़ता जा रहा है।'

'इसे वे जाने। लेकिन तुम जो इस प्रकार अपनी लगन को कारणहीन बनाए जा रहे हो, यह मुझे कुछ अपने लिए ज्यादती मालूम होती है।'

'यह तुम्हारी बहुत बड़ी भूल है! मैं अन्याय नहीं करूँगा, न पागल बनूँगा और न देश माता को 'माँ-माँ' पुकारकर आँसू ही बहाऊँगा—पर अपना काम करता रहूँगा, इसी में मेरी शक्ति है।'

'दुश्मन को अगर दुश्मन मानकर उससे द्वेष नहीं करोगे तो उसके विरुद्ध तुम हाथ कैसे चलाओगे?'

'रास्ते में पड़े हुए पत्थरों को जिस तरह अलग किया जाता है, उसी तरह बिल्कुल अप्रमत्त ढंग से। वे लोग अच्छे हैं या बुरे, यह कोई तर्क का विषय नहीं है। उनका राज एक विदेशी राज है। उसने अंदर-ही-अंदर हमारी आत्मा का लोप कर दिया है। यह एक अस्वाभाविक या स्वभाव-विरुद्ध दशा है और इसे दूर करने की कोशिश करके मैं अपने मानव-स्वभाव को स्वीकार कर रहा हूँ।'

'लेकिन अपनी सफलता के प्रति तुम्हें निश्चित आशा नहीं है।'

'न हो। फिर भी मैं अपने स्वभाव का अपमान नहीं करूँगा—चाहे निश्चित मृत्यु का ही सामना क्यों न करना पड़े। पराभव की आशंका है, इसीलिए उससे स्पर्धा करनी होगी और इस प्रकार उसकी उपेक्षा करके अपने आत्म सम्मान की रक्षा करनी होगी। मेरे विचार से तो अब हमारा यही

अंतिम कर्तव्य है।'

'लो, वे आ पहुँचे रक्त-गंगा बहानेवाले नकली भगीरथ। उन्हें चाय दे आऊँ। साफ-साफ कह भी दूँगा कि पुलिस को सारी बात की रिपोर्ट दे दी गई है। तुम्हारे दल के मूर्ख छोकरे कहीं मुझे 'लिंच' ना कर डालें (मार-मार कर प्राण न ले लें)!'

2

एला आरामकुर्सी (केदारा) में बैठी है, पीछे तकिया लगा है। पैर पर पैर रखे हैं। गोद में लकड़ी की एक तख्ती पर एक ऐसी कापी रखे कुछ लिखने में तल्लीन है, जिस पर देशबंधु दास का चित्र बना है। दिन डूबने में देर नहीं है, फिर भी अभी तक उसके बाल बिना सँवारे बिखरे हुए हैं। बैगनी रंग की एक खद्दर की साड़ी पहने है, वह जल्दी मैली नहीं होती, उसमें मैल छिपा रहता है, इसीलिए घर में पहनकर उसके प्रयोजन का अनादर किया जा रहा है। कलाइयों में लाल रंग की शंख की एक जोड़ चूड़ियाँ, गले में सोने का एक हार। हाथी दाँत की तरह गौरवर्ण और भरी हुई देह। लगता है, जैसे उम्र बहुत कम हो, लेकिन चेहरे पर विकसित बुद्धि की गंभीरता है, कमरे के एक कोने में दीवाल से सटी हुई लोहे की एक छोटी-सी खाट पड़ी है, जिस पर खद्दर की एक ही रंग की चादर बिछी है। फर्श पर नारायणी स्कूल में करघे पर बुनी दरी बिछी है। एक तरफ लिखने के लिए एक छोटी-सी टेबुल, जिस पर ब्लाटिंग पैड पड़ा है और कलमदान में कलम-पेंसिल और दावात सजाकर रखी है। दूसरी तरफ पीतल की एक कलसी में गंधराज के फूल लगे हैं। दीवाल पर एक बहुत ही पुराना फोटोग्राफ टँगा है, जिसकी क्षीण और पीली-पीली रेखाएँ भी मिटती जा रही हैं। अँधेरा बढ़ रहा है, चिराग जलाने का समय हो गया है। वह उठने-उठने को कर ही रही थी कि इतने में आँधी की तरह खद्दर का परदा हटाकर अतींद्र कमरे में आया और बोला 'एली!'

एला चौंककर खुशी से बोली, 'असभ्य! बिना सूचना दिए इस कमरे में आने का साहस करते हो!'

एला के पैरों के पास धम से जमीन पर बैठकर अतीन बोला, 'जीवन

बहुत छोटा है, और कायदे-कानून बहुत लंबे हैं। नियमों की रक्षा करते हुए चलने की आयु सतयुग में मांधाता को ही मिली थी। इस कलियुग में उसका टोटा पड़ गया है।'

'मैंने तो अभी कपड़े ही नहीं बदले।'

'ठीक ही है। तब तो तुम्हारी मेरे साथ निभ जाएगी। तुम रथ पर चलो और मैं पैदल चलूँ—ऐसा द्वंद्व तो मनु के नियम के अनुसार अधर्म है। एक जमाने में मैं विशुद्ध भद्रजन था—लेकिन मेरी खोल तो तुमने उतार फेंकी। अब मेरी वर्तमान वेश-भूषा के बारे में क्या विचार है?'

'कोश में इसे वेश-भूषा नहीं कहते।'

'तो क्या कहते हैं?'

'शब्द मुझे ढूँढ़े नहीं मिल रहा है। शायद भाषा में ही कोई न हो। तुम्हारे कुरते पर यह जो सामने टेढ़ा-तिरछा सीवन का निशान है, यह क्या तुम्हारी खुद की अपनी सिलाई-कला का विज्ञापन है?'

'यह इस बात का परिचय है कि मैं भाग्य का आघात गहरा होने पर भी उसे छाती से लगा लेता हूँ। इस कुरते को दरजी को देने की हिम्मत नहीं होती—आखिर उसे भी तो अपने सम्मान का कुछ ख्याल होगा ही।'

'मुझे क्यों नहीं दिया?'

'नए युग के संस्कार का भार तुमने लिया है, फिर ऊपर से मेरे पुराने कपड़े का भार?'

'इसे सहन करने की ऐसी कौन-सी जरूरत आ पड़ी थी?'

'जिस जरूरत के कारण भद्रजन अपनी स्त्री को सहन करते हैं।'

'इसका मतलब?'

'इसका मतलब है, एक से अधिक का न होना।'

'यह क्या कह रहे हो, अंतू! इतने बड़े संसार में इसके अलावा तुम्हारे पास और कोई कुरता ही नहीं?'

'बढ़ाकर कहना उचित नहीं, इसलिए घटाकर कहा है। जिस आश्रम में मैं आज हूँ उसके पहले के आश्रम में बाबू अतींद्र साहब के पास कई कपड़े थे और कई प्रकार के थे। इस बीच देश में बाढ़ आ गई। तुमने अपने भाषण में कहा कि ऐसे आँसू बहनेवाले दुर्दिन में जबकि अनेक स्त्री-पुरुषों को अपनी लाज ढँकने लायक कपड़ा भी नहीं मिलता, जिन लोगों के पास

जरूरत से ज्यादा कपड़े हैं उन्हें शरम आनी चाहिए। बड़े कायदे से कहा था यह तुमने। तब तुम पर खुलेआम हँसने की मुझमें हिम्मत नहीं थी। लेकिन मन-ही-मन मैं हँसा था। निश्चित जानता था कि तुम्हारी खुद की संदूक में जरूरत से ज्यादा कपड़े भरे होंगे। लेकिन अगर औरतों के पास पचास रंग के पचास कपड़े हों तो भी वे पचासों जैसे उनके लिए बहुत जरूरी होते हैं। उन दिनों देश का हित चाहनेवाली महिलाओं में होड़ लगी थी कि कौन कितना दान-संग्रह कर सकती है। मैंने अपना कपड़ों का ट्रंक तुम्हारे कदमों में ला रखा। तुम मारे खुशी के ताली बजाने लगीं।'

'यह क्या कह रहे हो? मुझे मालूम क्या था कि तुम इस तरह अपना सब कुछ ले आओगे।'

'आश्चर्य क्यों करती हो? ऐसी कठिन हानि को सहन करने की शक्ति इस देश में इतनी तेजी से किसने भर दी थी? अगर वस्त्र-संग्रह का भार अपने गणेश मजूमदार पर होता तो उसका पौरुष मेरे कपड़ों के संदूक को बहुत ही कम हानि पहुँचा सकता था।'

'छिः अंतू! तुमने मुझसे कहा क्यों नहीं?'

'अफसोस न करो। बिलकुल सोचनीय अवस्था ही आ गई हो, ऐसी बात नहीं है। रोजाना के इस्तेमाल के लिए दो कुरते रँगवाकर रख दिए हैं, बारी-बारी से धोकर पहनता हूँ। और भी दो तह करके विपत्ति में काम आने के लिए रखे हैं। अगर किसी दिन इस संदिग्ध संसार में अपने को भद्र वंश का व्यक्ति सिद्ध करने की जरूरत आ पड़ी तो उन दोनों कुरतों पर धोबी-दरजी का सर्टिफिकेट तो है ही।'

'तुम्हारे सृष्टिकर्ता का सर्टिफिकेट तो तुम्हारे इस चेहरे पर ही मौजूद है—किसी तरह की गवाही पेश करने की जरूरत नहीं होगी तुम्हें।'

'स्तुति! नारी के आगे स्तुति की अति करने का अधिकार तो हमेशा से पुरुषों का ही रहा है—तुम उसे उलट देना चाहती हो?'

'हाँ। प्रचार करना चाहती हूँ कि आधुनिक काल में नारियों के अधिकार बढ़ रहे हैं। पुरुष के बारे में सभ्य कहने में भी उन्हें कोई बाधा नहीं। नए साहित्य में देखती हूँ कि बंगाली महिलाएँ अपनी ही प्रशंसा में लगी हैं—देवी की प्रतिमा गढ़ने का काम उन्होंने कुम्हार के बजाय खुद ही ले लिया है। वे अपनी जाति के गुण-गौरव पर साहित्यिक रंग चढ़ा रही हैं। यह उनके

अंगराग में ही शरीक है, अपने हाथ से पीस-पासकर तैयार किया गया अंगराग, विधाता के हाथ का नहीं। इससे मुझे शरम मालूम होती है। अब चलो, बैठक में चलें।'

'यहाँ भी तो बैठने की जगह है। मैं तो एक अकेला हूँ, कोई सभा-जुलूस तो हूँ नहीं।'

'अच्छा, तो बताओ जरूरी बात क्या है?'

'अचानक एक कविता की पंक्ति याद आ गई—उसे कहाँ पढ़ा था, यह कुछ याद नहीं आता। सबेरे से याद करने की कोशिश कर रहा हूँ। तुमसे पूछने आया हूँ।'

'बड़ा जरूरी काम मालूम होता है। अच्छा, बताओ, कौन सी लाइन है?'

'जरा सोचकर बताओ किसकी रचना है—

तोमार चोखे देखे छिलाम
आमार सर्वनाश!'

(तुम्हारे नयनों में देखा मैंने अपना सर्वनाश!)

'किसी प्रसिद्ध कवि की रचना तो है नहीं।'

'पहले कभी सुनी हुई-सी नहीं लगती तुम्हें?'

'एक परिचित स्वर का आभास तो मिलता है थोड़ा-सा। दूसरी लाइन कहाँ है?'

'मेरा तो विश्वास था कि दूसरी लाइन अपने आप तुम्हें याद आ जाएगी।'

'तुम्हारे मुँह से अगर एक बार सुन लूँगी तो जरूर याद आ जाएगी।'

'तो सुनो—

दिवस शेष की अरुण आभा में रंगा था चैत्र मास,
तुम्हारे नयनों में देखा था मैंने अपना सर्वनाश!'

अतीन के सिर पर एक हल्की-सी थपकी लगाकर एला ने कहा, 'आज-कल तुमने यह क्या पागलपन शुरू कर रखा है?'

'उस दिन चैत्रमास की कुघड़ी से ही मेरा पागलपन शुरू हो गया है। जो दिन अपनी चरम अवस्था तक पहुँचने के पहले ही समाप्त हो जाते हैं, वे फिर छाया बनकर कल्पना के लोक में मँडराया करते हैं। उसी मरीचिका में मेरा-तुम्हारा मिलन होगा। आज उसी के लिए तुम्हें बुलाने आया हूँ—तुम्हारे

काम की कुछ हानि करूँगा।'

अपनी गोद से तख्ती और कापी जमीन पर फेंकते हुए एला बोली, 'रहने भी दो अपना काम। जरा दीया जला दूँ !'

'न न, रहने दो—प्रकाश प्रत्यक्ष को प्रमाणित करता है। चलो चलें, दीपहीन पथ से अप्रत्यक्ष की ओर। चार साल से कुछ कम की ही बात है, स्टीमर पर मोकामा घाट से गंगा पार हो रहा था। तब तक मैं अपनी पैतृक संपत्ति का फटा पल्ला पकड़े था, जो कर्ज से भरा था। तब मेरे तन और मन पर शौकीनी का रंग चढ़ा था, दिनांत के बादलों की तरह। सिल्क का कुरता पहने और कंधे पर मूँगे की चादर डाले मैं पहले दर्जे की डेक पर बेंत की आरामकुर्सी में बैठा था। अखबार के पन्ने इधर-उधर उड़ रहे थे और मैं उन्हें मजे में देख रहा था, ऐसा लगता था जैसे समाचार रूप धरकर इधर-उधर नाच रहे हों। तुम साधारण लोगों की भीड़ में पैसेंजर डेक पर कमर बाँधे खड़ी थी। अचानक तुम पीछे से मेरे आगे खड़ी हो गई। आज भी आँखों में तुम्हारी वह भूरे रंग की साड़ी साफ नजर आ रही है। जूड़े की दोनों ओर पिन से अटका हुआ साड़ी का पल्ला हवा से झूल रहा था। कुछ प्रयत्न करके असंकोच का भाव लाकर तुमने पूछा था—आप खद्दर क्यों नहीं पहनते ?—याद आ रह है न ?'

'हाँ, साफ-साफ याद है। अपने मन की छवि से तुम बात कर सकते हो ?'

'मैं तो आज उस दिन की बातों को दोहराता जाऊँगा, तुम्हें सुनना होगा।'

'सुनूँगी नहीं तो क्या करूँगी। वह दिन मेरे लिए नवीन जीवन के गीत की टेक की तरह है, बार-बार मन वहीं लौट जाना चाहता है।'

तुम्हारा स्वर सुनकर मैं चौंक उठता था, वह स्वर जैसे मेरे मन में आकर चाँदनी सा छा गया। जैसे आकाश से कोई अति सुंदर चिड़िया उतर आई और एक ही झपट्टे में मेरा सब कुछ छीन ले गई हो। एक अपरिचित महिला की उस कल्पनातीत स्पर्धा पर अगर मैं अपना क्रोध प्रकट कर पाता तो शायद मैं बच जाता और उस दिन पार लगानेवाला स्टीमर मुझे ऐसे खतरनाक घाट पर नहीं छोड़ता। और, अंत में शायद मैं आज भी भद्रजनों के मोहल्ले में आराम से दिन बिताता होता। लेकिन तब मन जैसे गीली दियासलाई की तरह ठंडा हो गया था, क्रोध की आग जल ही नहीं सकी। मेरे स्वभाव में अहंकार

प्रधान है। इसीलिए फौरन ख्याल आया कि वह लड़की मुझे पसंद नहीं करती होती तो इस तरह विशेष रूप से मुझे ही धमकी देने नहीं आती। खद्दर प्रचार का तो महज एक बहाना था—अच्छा, बताओ, सच बात यही थी न?

'ओ हो, कितनी बार कह चुकी हूँ कि हाँ, बहुत देर तक डेक के कोने में बैठी मैं तुम्हें देख रही थी। मैं यह भी भूल गई थी कि कोई अन्य व्यक्ति भी मेरी इस हरकत को ताड़ रहा होगा। मेरे जीवन में मेरे लिए ही सबसे आश्चर्यजनक घटना है—बस, एक नजर में चिरपरिचय का हो जाना। मन ने कहा, कहाँ से आ गया है वह दूरदेश का कोई। अपने आस-पास के लोगों-सा लगता ही नहीं, यह तो जैसे सेवार के बीच शतदल कमल-सा लग रहा है। और तभी मैंने मन-ही-मन प्रण कर लिया कि इस दुर्लभ मनुष्य को पास खींचना होगा—केवल अपने पास ही नहीं, बल्कि अपने सब के पास।'

'यह तो मेरा दुर्भाग्य था कि तुम्हारी एकवचन की माँग बहुवचन की माँग के नीचे दब गई!'

'मेरे लिए इसके अलावा कोई चारा नहीं था, अंतू। कुंती ने द्रौपदी को देखने के पहले ही कह दिया था कि तुम लोग आपस में बाँट लो! तुम्हारे आगमन के पहले ही मैंने देश-सेवा का व्रत ले लिया था, कि अपने लिए कुछ भी नहीं रखूँगी। मैं तो देश के लिए वाग्दत्ता हूँ।'

'इस तरह तुम्हारा प्रण लेना अधार्मिक है। और इस प्रण की रक्षा करना भी तुम्हारे लिए अपने धर्म के प्रति एक विद्रोह है। इस प्रण को अगर तोड़ दो, तो सत्य की रक्षा हो सकती है। जो लोभ पवित्र है और अंतर्यामी की आदेश-वाणी की भाँति है, उसे तुमने अपने दल के पैरों तले रौंदवा डाला है—इसका दंड तुम्हें भोगना होगा।'

'अंतू, दंड की तो सीमा नहीं, वह रात-दिन मुझे मार रहा है। जो आश्चर्यमय सौभाग्य सारी साधनाओं के परे है, वह मेरे सामने आया और फिर भी मैं उसे न पा सकी। वैसे तो हर दिल में गाँठ बँधी हुई है, फिर भी मैं यही मानती हूँ कि इतना बड़ा दुस्सह वैधव्य किसी लड़की के भाग्य में न आए। मैं जैसे मंत्र पढ़कर खींचे गए घेरे के भीतर थी। लेकिन तुम्हें देखते ही मन उत्सुक हो उठा और कहने लगा कि टूटने दो इस घेरे को। मुझमें इतनी उथल-पुथल हो सकती है, इसकी मैंने कल्पना तक नहीं की थी। अगर मैं यह कहूँ कि इसके पूर्व कभी मन विचलित ही नहीं हुआ था, तो

ऐसा कहना तो गलत ही होगा। लेकिन हाँ, चंचलता पर काबू पाकर मैं अपनी शक्ति के गर्व पर प्रसन्न होती थी। लेकिन विजय का वह गर्व अब नहीं रहा, मैंने जैसे अपनी शक्ति ही खो दी—बाहर की बात जाने दो, भीतर की ओर गौर से देखो, तो मैं हार गई हूँ। तुम वीर हो, मैं तुम्हारी बंदिनी हूँ।'

'मैं भी हार गया हूँ, अपनी इस बंदिनी के आगे। मेरी हार अभी खतम भी नहीं हुई। मैं तो प्रतिक्षण युद्ध में रत हूँ और प्रतिक्षण हार रहा हूँ।'

'अंतू! पहले दर्जे की डेक पर जब एक अपूर्व आविर्भाव की भाँति तुमने दूर से मुझे दर्शन दिए थे, तब तक मैं यही समझती थी कि तीसरे दर्जे का टिकट हमारे आधुनिक आभिजात्य का एक निषेध है। अंत में तुम रेल में चढ़े दूसरे दर्जे में और मुझे भी उसी दर्जे की ओर खींच लिया। यहाँ तक कि मेरे मन में एक चाल सूझ आई कि गाड़ी के छूटने के समय मैं तुम्हारे डिब्बे में चढ़ जाऊँगी और कहूँगी कि जल्दी में गलती हो गई। काव्य और साहित्य में स्त्रियाँ ही अभिसार के लिए जाया करती हैं, सांसारिक बाधा के कारण ही शायद कवियों ने इसकी व्यवस्था की है। ऊहापोह करनेवाले मन की जितनी भी बिखरी हुई इच्छाएँ हैं वे भीतर-ही-भीतर अँधेरी कोठरी की दीवालों से सिर पीटती रहती हैं। स्त्रियाँ अपनी बात को पर्दे के बाहर किसी भी हालत में स्वीकार नहीं करना चाहतीं। लेकिन तुमने मुझसे स्वीकार करा लिया है।'

'क्यों स्वीकार किया तुमने?'

'नारीसुलभ गर्व को त्यागकर केवल स्वीकृति ही तो तुम्हें दे सकी हूँ, इसके अलावा और तो कुछ दे ही नहीं सकी।'

सहसा अतीन ने एला का हाथ पकड़कर दबा दिया और कहा,'क्यों नहीं दे सकी? किसी बात की रुकावट थी मुझे ग्रहण करने में? समाज की? जाति-भेद की?'

'छिः, ऐसी बात भी मन में न लाना। बाहर की बाधा नहीं, बस भीतर ही की बाधा है।'

'तो काफी प्रेम नहीं हुआ अभी शायद?'

'काफी का कोई अर्थ नहीं होता, अंतू। जो शक्ति अपने हाथ से पहाड़ जैसी चीज को हटाने में असफल रही हो, उसे कमजोर कहकर चिढ़ाओ मत। मैंने शपथ ली थी कि ब्याह न करूँगी, ऐसा नहीं भी करती? तो भी संभव था कि मेरा ब्याह कभी न होता।'

'क्यों नहीं होता?'

'बुरा न मानो, अंतू। प्यार करती हूँ, इसी से तो संकोच है। मैं तो निःस्व हूँ, तुम्हें दे ही क्या सकती हूँ।'

'कुछ साफ तो कहो।'

'कई बार तो कह चुकी हूँ।'

'फिर से कहो, आज मैं सारा कहना-सुनना खत्म कर लेना चाहता हूँ। इसके बाद फिर कभी नहीं पूछूँगा।'

तभी बाहर से आवाज आई, 'दीदी।'

'क्या है, अखिल। आ न भीतर।'

इस लड़के की उम्र सोलह या अठारह साल होगी। जिद्दी और शरारत भरा सुहावना-सा चेहरा। बड़े-बड़े उलझे हुए घुँघराले बाल! गेहुँआ रंग, चंचल आँखों में एक प्रकार की चमक है। खाकी रंग की कमीज और उसी रंग का ऊँचा कोट पहने है। कमीज का एक बटन खुला है जिससे छाती का कुछ हिस्सा दिखाई दे रहा है। कमीज की दोनों तरफ की जेबें न मालूम किन-किन बेकार की चीजों से ठुँसी पड़ी हैं। ऊपर की जेब में कई तरह के फलोंवाला एक हिरन के सींग का चाकू है। यह लड़का खेलने के लिए कभी तो नाव बनाता है और कभी हवाई जहाज बनाता है। अभी वह मल्लिक कंपनी के बगीचे में पानी निकालनेवाली मशीन देखकर आया है और बिस्कुट के टिन वगैरह जोड़कर उसी की नकल करने की कोशिश कर रहा है। इसमें उसने अपनी उँगली काट ली है और उस पर कपड़ा लपेट रखा है। एला पूछती है तो कुछ जवाब ही नहीं देता। एला इस बिना माता-पिता के लड़के की दूर की बहन लगती है। इसलिए बेचारी को बहुत बरदाश्त करना पड़ता है। यह न जाने कहाँ से नाटी नस्ल का एक बंदर सस्ते दाम में ले आया है। बंदर भंडारघर की चोरी में बहुत ही होशियार है। एला के अपने छोटे से परिवार में यह जानवर एक बड़ी भारी आफत की तरह रहता है।

कमरे में घुसते ही अखिल ने लजाते हुए एला के पैर छुए। एला समझ गई कि उसका यह प्रणाम जरूर किसी खास उद्देश्य से प्रेरित है, क्योंकि इस तरह का भक्ति-भाव उसके स्वभाव के बाहर की चीज है।

एला बोली, 'अपने अंतू भैया को नमस्कार नहीं करोगे?'

उसका कोई जवाब न देकर अखिल अतीन की ओर पीठ करके खड़ा हो गया।

अतीन ठहाका मारकर हँस पड़ा और अखिल की पीठ ठोंककर बोला, 'शाबाश, सिर अगर झुकाना ही हो तो सिर्फ एक ही देवी के आगे झुकाना चाहिए। उस एकेश्वरी के आगे मैं भी सिर झुकाता हूँ—अब प्रसाद के बँटवारे में नाराजी न दिखाओ भाई, काफी प्रसाद बचा है।'

एला ने अखिल से पूछा, 'क्या कहना है तुम्हें, बोलो न।'

वह बोला, 'कल मेरी माँ के मरने का दिन है।'

'अच्छा! मैं तो भूल ही गई थी। श्राद्ध में किसी को न्योता देना चाहता है?'

'न, किसी को नहीं।'

'तो फिर क्या चाहते हो?'

'पढ़ने-लिखने से छुट्टी चाहता हूँ, तीन दिन के लिए।'

'तीन दिन की छुट्टी लेकर क्या करोगे?'

'खरगोश के लिए पिंजड़ा बनाऊँगा।'

'खरगोश तो तुम्हारे एक भी नहीं बचे, तब पिंजड़ा किसके लिए बनाओगे।'

अतीन ने हँसकर कहा, 'खरगोश तो कल्पना करने से भी आ सकते हैं, असल बात तो पिंजड़ा बनाना है। मनुष्य तो अनित्य है, आता है और चला जाता है। लेकिन चिरकाल से बहुत पक्की तौर से पिंजड़ा बनाने का भार भगवान मनु से लेकर उनके आधुनिक अवतार तक सबने ले रखा है। इसका उन्हें बड़ा भारी शोक है।'

'अच्छा, जाओ, तुम्हारी छुट्टी हुई।'

और कुछ कहे-सुने बिना अखिल वहाँ से फौरन भाग गया।

अतीन ने कहा, 'इसे मैं वश में नहीं कर सका, मेरी पुरानी संपत्ति की झाड़न-पोंछन में एक कलाई घड़ी बच रही थी। आजकल के लड़कों के लिए ऐसी चीजें ही जैसे किसी राजा के राज से कम नहीं होती। एक दिन मैंने वह घड़ी इसे देनी चाही, तो यह सिर हिलाकर चलता बना। इसी से समझ सकती हो कि हम दोनों का मामला कुछ संगीन हो उठा है।'

'लड़कों से मेल-मुलाकात करने में तुम्हारा जोड़ नहीं, लेकिन फिर भी

इस बंदर से तुमने हार क्यों मान ली?'

'बीच में जो तीसरा पक्ष दखल दे रहा है, वरना हम दोनों कभी के हरि-हर बन गए होते। खैर, जाने दो। बोलो, तुम क्या जवाब देती हो? मुझे तुमने क्यों अलग रखा?'

'एक सीधी-सी बात तुम्हें याद क्यों नहीं रहती कि मैं उम्र में तुमसे बड़ी हूँ।'

कारण यह है कि तुम्हारी उम्र अट्ठाईस साल है और मेरी अट्ठाईस साल कुछ महीने है। इसे प्रमाणित करना भी बहुत आसान है; क्योंकि इसका दस्तावेज किसी ताम्रपत्र पर ब्राम्ही लिपि में नहीं लिखा है, जो पढ़ा न जा सके।

'मेरा अट्ठाईस तुम्हारे अट्ठाईस को पार करके बहुत दूर पहुँच गया है। तुम्हारे अट्ठाईस में यौवन की सभी दीपशिखाएँ निर्धूम जल रही हैं। अब भी तुम्हारी खिड़कियाँ अनागत और अचिंत्य के लिए खुली हुई हैं।'

'एली, मेरी बात तुम किसी प्रकार भी समझना नहीं चाहतीं, इसीलिए समझती नहीं। अपने दल के सामने तुमने ईश्वर के सत्य के विरुद्ध एक सत्य का प्रण किया है। इसीलिए तरह-तरह की युक्ति और तर्कों से अपने को बहला रही हो और साथ ही मुझे भी। बहलाओ, लेकिन यह न कहो कि मेरे जीवन में अब भी अनागत-अचिंत्य दूर रह गया है। वह आ गया है और वह तुम। इस पर भी वह अनागत है। क्या हमेशा ही उसकी ओर खिड़की खुली रहेगी? उस शून्य के भीतर से क्या मेरा आर्त स्वर ही गूँजता रहेगा और दूसरी ओर से कोई उत्तर ही नहीं मिलेगा।'

'उत्तर नहीं आता, ऐसा तुम कैसे कह सकते हो? अकृतज्ञता चाहती हूँ, तुम्हें चाहती हूँ, तुमसे ज्यादा और कुछ इस संसार में नहीं चाहती! केवल तुम मिल नहीं सके, 'शुभ दृष्टि' संपन्न नहीं हो सकी। फिर भी कहती हूँ कि यह मेरा सौभाग्य ही है कि नहीं मिले।'

'क्यों? हानि क्या थी उसमें?'

'मेरा जीवन सार्थक हो जाता, लेकिन इसका मूल्य ही क्या है? तुम किसी के समान तो हो नहीं, तुम तो महान हो। तुमसे दूर हूँ, इसीलिए तो तुम्हारे उस असाधारण प्रकाश को देख सकी हूँ। अपने साधारणत्व में तुमको लेकर जकड़ लेने से मुझे डर लगता है। मेरी छोटी-सी दुनिया में तुम एक

साधारण और तुच्छ आदमी बन जाओगे। कैसे बताऊँ तुम्हें कि मैं कितना ऊपर मुँह उठाकर तुम्हारा उन्नत ललाट देख पाती हूँ! नारी की पूँजी ही क्या होती है, जीवन की छोटी-छोटी बातें ही तो। और ऐसी स्त्रियों की कमी नहीं, जिन्हें उस बोझ से तुम्हारे जैसे पुरुष के जीवन को ढँक देने में कोई हिचक नहीं। लेकिन उन्होंने न मालूम कितने जीवनों को दुखांत बना दिया है, यह मैं जानती हूँ। मैंने अपनी आँखों देखा है कि लता के जाल ने पेड़ को बढ़ने नहीं दिया। स्त्रियाँ शायद समझती हैं कि पुरुष को जकड़े रहना ही काफी है।'

'एला, जो पीता है वही जानता है कि कॉफी किसे कहते हैं।'

'मैं अपने को बहलाना नहीं चाहती अंतू। प्रकृति ने हम स्त्रियों का हमेशा अपमान किया है। इस दुनिया में प्राणिविज्ञान का संकल्प ढोती आई हैं, साथ ही जीव प्रकृति द्वारा इकट्ठी की हुई वस्तुएँ भी। अगर हम ठीक तरह से उन्हें इस्तेमाल करना जानती होतीं तो बहुत आसानी से अपना सिंहासन जीत सकती थीं। असल में साधन के क्षेत्र में पुरुष को अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करनी पड़ती है। वह श्रेष्ठता वास्तव में क्या है, इसे जानने का सौभाग्य मुझे मिला है। पुरुष हमसे बहुत बड़े हैं।'

'क्या ऊँचाई में भी?'

'हाँ, ऊँचाई में भी। प्रकृति को लाँघकर बड़ा होने का सेहरा उसके ही सिर है। मुझमें बुद्धि वगैरह चाहे कुछ भी न हो, लेकिन विनम्र होकर अपने को जो सौंप सकी हूँ, वह सिर्फ ऊपर की ओर देखकर ही।'

'नीचे के किसी प्राणी ने उधम नहीं मचाया?'

'मचाया है! हमारे खिंचाव से जो लोग प्राणि-विज्ञान की निचली मंजिल पर उतर आते हैं वे अक्सर कुरूप होकर बिगड़ जाते हैं। विशेष व्यक्तिगत इच्छाएँ और आवश्यकताएँ न होने पर भी नीचे खींच लाने के एक साधारण षड्यंत्र में हम सभी नारियाँ एक हो गई हैं—सजधज, बनाव-शृंगार, हाव-भाव वगैरह बनावटी बातों में हम सब एक हैं।'

'मूर्खों को बहलाने के लिए?'

'हाँ, हाँ, क्यों नहीं! भला तुम लोग मूर्ख ही तो हो! बहुत ही आसान मंत्र से बहल जाते हो, इसीलिए तो लोगों को इतना घमंड है। हम मूर्खों को प्यार करती हैं, लेकिन फिर भी उनकी मूर्खता के चरम शिखर पर हमने सूर्योदय को भी पहचाना है और तब उनकी पूजा भी की है। नीच, निंदक और कंजूस

भी बहुत-से देखे हैं। उन सबको छाँटकर भी तो बहुत-कुछ बच रहता है। उन बचे हुए लोगों को ही उज्ज्वल प्रकाश में देखा है। उनमें से बहुतों का नाम तक किसी को याद न रहेगा, लेकिन फिर भी वे बड़े हैं, महान हैं।'

एली, तुम्हारी बात सुनकर मुझे लज्जा आती है। सोचता हूँ कि प्रतिवाद न करने से भद्दा मालूम होगा। लेकिन साथ ही यह अच्छा भी लगता है। लेकिन सच्ची बात में मैं तुमसे हार नहीं मान सकता। अपने देश के पुरुषों में कापुरुषता के कुछ लक्षण मैं शुरू से देखता आ रहा हूँ, और इस बात ने मुझे बराबर चिंता में डाला है। आज मैं तुमसे भी कहूँगा। मैंने देखा है कि 'मेरी जान-पहचान के परिवार में और मेरे अपने घर में भी सासें बहुओं पर असह्य अन्याय करती हैं। उनके अत्याचार की कथाएँ इस देश में हमेशा से प्रचलित हैं।'

'हाँ, यह मैं जानती हूँ। मैंने खुद अपने घर में देखा है कि जो आदमी खुद भीतर से कमजोर है, वही कमजोरों का असली शत्रु है—उसके जैसा निष्ठुर और कोई हो नहीं सकता।'

'एला, कहीं ऐसी बात कहकर तुम अपनी भावी सास की निंदा की भूमिका न बाँधना। नई दुलहन पर अत्याचार के समाचार अक्सर सुनने में आते हैं, और प्राय: देखा है कि इसकी प्रधान नायिका सास ही होती हैं! लेकिन एक बात पूछता हूँ कि सास को बेरोक-टोक अत्याचार करने का अधिकार किसने दिया? उन स्त्रैण पुरुषों ने ही तो! अत्याचारिणी के विरुद्ध अपनी स्त्री की लाज रखने की शक्ति जिसमें नहीं, उन नाबालिगों की भी कभी शादी होनी चाहिए? जब उनकी कम उम्र होती है, तब वे अपनी माँ के लल्ला बन जाते हैं। जहाँ पुरुष का पौरुष कमजोर होता है वहीं स्त्रियाँ नीचे उतर आती हैं, और उन्हें भी नीचता की ओर उतारती रहती हैं। अब तो देखा जाता है कि हमारे देश में जो लोग कोई बड़ा काम करना चाहते हैं, वे स्त्री को त्याग देते हैं। वे भी स्त्रैण और कापुरुष हैं, स्त्री से डरते हैं। इसलिए इन कापुरुषों के देश में तुमने ब्याह न करने का प्रण किया है। शायद इसी डर से कि कहीं कोई कोमल और कच्चा मन तुम्हारे स्त्रीसुलभ स्वभाव से लचककर टेढ़ा न हो जाए। लेकिन जो यथार्थ पुरुष हैं वे यथार्थ स्त्री के बल पर ही चरितार्थ होंगे, और विधाता का यह अपने हाथ का लिखा आदेश तुम्हारे रक्त में भी मौजूद है। जो उस विधि-लिपि को व्यर्थ कर देता है, वह

पुरुष कहलाने के योग्य नहीं है। परीक्षा करने का भार तुम्हारे हाथ में ही था, तुमने परीक्षा लेकर मुझे देखा क्यों नहीं?'

'अंतू, मैं भी बहस कर सकती थी, लेकिन तुम्हारे साथ मैं बहस नहीं करूँगी; क्योंकि मैं जानती हूँ कि तुमने बहुत क्षोभ में भरकर इन सारी कु-युक्तियों का प्रयोग किया है। मेरे प्रण की बात तुम्हारे भुलाए भूलती नहीं।'

'नहीं, भूल नहीं पाता। तुमने तो कह ही दिया है कि पुरुष महान् है और तुम्हें डर इस बात का है कि स्त्रियाँ उसे महान् बनाती हैं। स्त्रियों को तो महान् होने की जरूरत ही नहीं होती। वे जो कुछ हैं उसमें ही पूर्ण हैं। जो अभागा महान् नहीं है, वह पूर्ण नहीं है।—उसके लिए सृष्टिकर्ता को लज्जित होना चाहिए, है न?'

'अंतू, उस अपूर्णता में ही हमें विधाता की इच्छा दिखाई देती है, वह महान इच्छा है।'

'एली, विधाता की इच्छा ही बड़ी होती है, यह तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन उसकी कल्पना भी किसी प्रकार छोटी नहीं है। उस कल्पना का जादू तो स्त्रियों की ही प्रकृति को मिला है, वे ही संसार में कलाकार की साधना लाई हैं और उन्हीं ने अपने तन और मन से, अपने स्वरूप और स्वर से अनिर्वचनीय को प्रकट किया है। यह तो सहज स्वाभाविक शक्ति का काम है और इसीलिए इतना सहज नहीं है। यह जो तुम्हारे शंख-से चिकने गले में सोने का हार है, इसके लिए तुम्हें कुछ विशेष याद नहीं रखना पड़ता। और ऐसी अभागिनी स्त्रियाँ भी मौजूद हैं जो अपने जीवन में रूप की सृष्टि में रस नहीं ला सकतीं, वे लोग या तो सोने के मोटे कड़े पहनकर अपना गृहिणीपन ही दिखाने में लगी रहती हैं या फिर दासी बनकर आँगन लीपकर जीवनयापन करती हैं। ऐसे असमर्थों की संसार में कोई गिनती नहीं।'

'मैं तो सृष्टिकर्ता को ही दोष दूँगी, अंतू। उसने स्त्रियों को लड़ने की ताकत क्यों नहीं दी? जब मैंने किताबों में पढ़ा कि संसार का जो सबसे जघन्य जासूसी का पेशा है, उसमें स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक निपुण होती हैं, तब मैंनें सिर धुनकर विधाता से प्रार्थना की कि सात जन्म में भी मुझे स्त्री का जन्म न मिले! पुरुषों को मैंने नारी की आँखों से देखा है, इसीलिए सब-कुछ छोड़कर मैंने उनकी श्रेष्ठता ही देखी है, उनकी महानता ही मैं देख सकी हूँ। जब मैं देश के बारे में सोचती हूँ तो उन स्वर्ण जैसे युवकों के बारे में ही

सोचती हूँ, मेरा देश तो उन्हीं के बीच है। वे अगर गलती करें तो बहुत बड़ी गलती कर सकते हैं। यह देखकर मुझे बहुत दु:ख होता है कि अपने घर में ही उन्हें जगह नहीं मिलती। मैं उन्हीं की माँ हूँ, बहन हूँ, लड़की हूँ। यह सब सोचकर मेरी छाती भर आती है। अंग्रेजी पढ़ी लड़कियाँ अपने को सेविका कहने में हिचकती हैं। लेकिन मैं तो अपने पूरे मन से कहती हूँ कि मैं सेविका हूँ, तुम्हारी सेवा करने में ही मेरी सार्थकता है। हमारे प्रेम की चरम सीमा इसी भक्ति में है।'

'ठीक ही है। तुम्हारी उस भक्ति के लिए बहुत-से पुरुष मौजूद हैं। लेकिन इससे मुझे क्या? भक्ति के बिना भी मेरा काम चल जाएगा। स्त्रियों के बारे में तुमने बहुत-कुछ कहा, लेकिन खास बात यह है कि दोष मेरे भाग्य का ही है।'

'तुम्हारी अपेक्षा मैं तुम्हें अधिक जानती हूँ, अंतू। मेरे स्नेह-प्रेम के पिंजड़े में दो ही दिन में तुम्हारे पंख फड़फड़ा उठे। हम नारियों के हाथ में तृप्ति के जो कुछ उपकरण हैं वे आखिर एक दिन चुक ही जाते। तब तुम समझ जाते कि मैं कितनी गरीब हूँ। इसीलिए मैंने अपनी सारी माँगें वापस ले लीं और अपने पूरे मन से तुम्हें देश के हाथ सौंप दिया है। वहाँ तुम्हारी शक्ति को स्थान की कमी के कारण दुख नहीं होगा।'

जैसे बहुत गहरी व्यथा के स्थान पर चोट लगी हो, इस प्रकार अतीन की आँखें चमक उठीं। उठा और एक बार कमरे में इधर-से-उधर चक्कर लगा आया। फिर एला के सामने खड़े होकर उसने कहा,'तुमसे कड़ी बात कहने का समय आ गया है, एला। मैं पूछता हूँ कि देश के हाथ या और किसी के हाथ मुझे सौंपनेवाली तुम कौन हो? तुम अपने माधुर्य का दान सौंप सकती थी, वह तुम्हारी अपनी चीज थी। तुम उसे सेवा कहती हो तो वही सही। और अगर वरदान कहना चाहो तो वही सही। अगर मुझे अहंकार करने दो तो अहंकार करूँगा और विनम्र होकर अपने द्वारा आने दो तो मैं वैसे भी आ सकता हूँ। लेकिन तुम आज अपने दान के अधिकार को बहुत तुच्छ रूप में ले रही हो। तुम नारी के हृदय की महिमा का ऐश्वर्य दे सकती थीं, लेकिन उसे छिपाकर तुम कह रही हो कि मैंने तुम्हें देश के हाथ सौंप दिया। नहीं दे सकती तुम, नहीं दे सकती, कोई भी नहीं दे सकता। देश का मामला ऐसा नहीं कि उसे एक के हाथ से दूसरे के हाथ सौंपा जा सके।'

एला का चेहरा उतर गया। वह बोली, 'क्या कह रहे हो, कुछ समझ में नहीं आया।'

'मैं कह रहा हूँ कि नारी को केंद्र मानकर जो माधुर्य का लोक फैला है, उसका विस्तार हालाँकि देखने में छोटा मालूम होता है, लेकिन उसकी गहराई की सीमा नहीं। वह कोई पिंजड़ा नहीं। मेरी निज शक्ति उसमें पूरी तरह से व्यक्त नहीं हो पाती, इसीलिए वे अस्वस्थ हो जाती हैं, उसमें विकृति आ जाती है, और जो उसका अपना वास्तविक रूप नहीं है, उसे ही वह व्यक्त करना चाहती है। मैं लज्जा से भर उठता हूँ, लेकिन क्या करूँ, निकलने का कोई दरवाजा नहीं। तुम जानती नहीं कि मेरे पंख छिन्न-भिन्न हो गए हैं और दोनों पैर ठिठुरकर जम गए हैं। अपने देश में अपना स्थान चुन लेने की जिम्मेदारी अपनी ही शक्ति पर है और वह शक्ति मुझमें थी। क्यों तुमने मुझे उस बात को भुलवा दिया?'

रूँधे हुए गले से एला ने कहा, 'तुम भूले क्यों, अंतू?'

'भुलाने की शक्ति तुम लोगों में एक अमोघ अस्त्र की तरह है। वरना भुलने के कारण मैं लज्जित ही होता। मैं हजार बार मानूँगा कि तुम मुझे भुला सकती हो, अगर न भूलता तो अपने पौरुष पर ही मुझे संदेह होता।'

'अगर यही बात है तो फिर मुझे क्यों फटकार रहे हो?'

'यही तो बता रहा हूँ। तुम मुझे भुलाकर वहीं ले जाओ, जहाँ तुम्हारी अपनी दुनिया है, अपना अधिकार है। दल की बात अगर कही जाए तो कहना होगा कि तुम लोगों ने संसार में कर्तव्य का केवल एक ही मार्ग निश्चित कर रखा है। तुम्हारे उस कठोर कर्तव्य के राजमार्ग पर मेरा जीवन-स्रोत बार-बार चक्कर खाकर अपनी गति खो बैठता है।'

'कर्तव्य का राज-मार्ग?'

'हाँ, तुम लोगों का स्वदेशी कर्तव्य यानी जैसे जगन्नाथजी का रथ हो! मंत्रदाता ने कहा कि सब मिलकर एक मोटे रस्से को कंधे पर लेकर आँख मूँदकर इसे खींचते रहो—बस, यही तुम्हारा एकमात्र काम है और हजारों लड़के कमर बाँधकर लगे रस्सा खींचने। कितने ही पहिए के नीचे आ गिरे और जीवन भर के लिए पंगु हो गए। इतने में रथ के लौटाए जाने का मंत्र पढ़ा गया और रथ लौट पड़ा। अब जिनकी हड्डियाँ टूट चुकी थीं, वे तो फिर से जुड़ने से रहीं। अंत में पंगुओं को खींच-खाँच कर अलग धूल के ढेर पर

डाल दिया गया। आत्म-विश्वास को पहले से ही इस प्रकार नष्ट कर दिया गया था कि सब कोई अपने को अधिकारिक खिलौने के साँचे में ढलवाने के लिए राजी हो गए। सरदार ने जब रस्सा खींचा और सबने नाचना शुरू कर दिया तो अचरज से समझा गया कि इसी को शक्ति का नृत्य कहते हैं। नाचनेवाले ने जरा-सी ढील की कि अनेक मनुष्य खिलौने की तरह रद्द कर दिए गए।'

'अंतू, उनमें से बहुत से पागलों की तरह कदम बढ़ाने लगे थे, वे ताल ठीक नहीं रख सके थे।'

'यह तो शुरू से ही जानना चाहिए था कि आदमी अधिक समय तक पुतली की तरह नाच नहीं सकता। माना कि मनुष्य के स्वभाव को संस्कार में भी ढाला जा सकता है, लेकिन उसमें भी तो समय लगता है। स्वभाव का गला घोंटकर मनुष्य को कठपुतली बना देने से काम आसान हो जाता है, यह मानना भूल है। यही सत्य है कि मनुष्य को आत्मशक्ति रखनेवाला एक विचित्र जीव माना जाए। मुझे अगर तुम वैसी ही जीव मानकर श्रद्धा करतीं तो अपने इस गुट में नहीं खींच लातीं बल्कि अपने हृदय से लगातीं।'

'अंतू, शुरू से ही तुमने मुझे अपमानित करके भगा क्यों नहीं दिया? मुझे क्यों अपराधी बनाया?'

'इसे तुमने बार-बार कहा है। तुम्हारे साथ मैं मिल जाना चाहता था, और यह बात बहुत ही आसान थी। लोभ तो जीतने के लिए कठिन था ही, ऊपर से प्रचलित मार्ग भी बंद थे। आखिर मैं अपनी जान हथेली पर रखकर इस टेढ़े मार्ग से चल पड़ा। तुम मुग्ध हो गई। आज मुझे मालूम हो गया कि इसी रास्ते में मरना होगा। मेरी वह मृत्यु जब पूरी हो चुकेगी तब तुम मुझे वापस बुलाओगी, हमेशा अपने शून्य हृदय के पास बुलाती रहोगी।'

'मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, इस तरह न कहो।'

'मैं मूर्ख की तरह बक रहा हूँ और यह सब रोमांटिक-सा लग रहा है। जैसे आकारहीन पाने को ही पाना कहा जाता हो। जैसे तुम्हारा उस दिन का बिरह आज के इस प्रतिहत मिलन की कीमत एक कौड़ी भर भी चुका सकता हो!'

'आज तुम्हें बातों ने पकड़ लिया है, अंतू।'

'आज पकड़ा है? हमेशा से पकड़ रखा है। जब मैं छोटा था, जब मेरा

मुँह तक ठीक से खुला भी नहीं था, तभी से जैसे किसी मौन अंधकार से बातें फूट-फूटकर निकलना चाहती थीं—न मालूम कैसी-कैसी उपमाएँ, तुलनाएँ और बेमेल बातें! जब मेरी उम्र हुई और मैंने साहित्य-संसार में प्रवेश किया तो देखा कि इतिहास के हर मार्ग पर पुराने साम्राज्यों के भग्न स्तूप खड़े हैं, वीरों की रण-सज्जाएँ छिन्न-भिन्न पड़ी हैं, टूटे-फूटे विजय-स्तंभों की दरारों से पीपल के पौधे फूट रहे हैं—न मालूम कितनी शताब्दियों के न जाने कितने प्रयास धूल के ढेर में चुपचाप सोए पड़े हैं। समय के उस कूड़े के ढेर पर केवल वाणी का एक अटल सिंहासन दिखाई दिया। उस सिंहासन के चरणों में युग-युगांतर लोट रहा है। कितने दिनों तक मैं इस कल्पना में रहा कि मैं उस सिंहासन के स्वर्ण-स्तंभों पर अलंकार रचने के लिए ही आया हूँ। इस तरह तुम देख सकती हो कि तुम्हारे अंतू को आज से नहीं हमेशा से बातों ने पकड़ रखा है। उसे तुम कभी भी ठीक से पहचान सकोगी, इसकी आशा अब नहीं रही। ओह, तुमने उसे अपने दल के शतरंज के मोहरों में शामिल कर लिया!'

एला ने कुर्सी से उठकर अतीन के पैरों में अपना सिर रख दिया। अतीन ने उसे उठाकर अपने पास बिठा लिया और कहा, 'तुम्हारे इस शरीर-सौंदर्य को मैंने अपने मन-ही-मन सजाया है, तुम मेरी संचारिणी पल्लविनी लता हो—तुम मेरी 'सुखमिति वा दुःखमिति वा' हो। मेरे चारों ओर एक अदृश्य आवरण है—वाणी का आवरण, साहित्य की अमरावती से आकर वह बाहरी भीड़ को सँभाले रहता है। तुम्हारे मास्टर साहब इस बात को जानते हैं कि मैं चिर स्वतंत्र हूँ, लेकिन फिर भी मुझ पर विश्वास क्यों करते हैं?'

'इसी कारण तो विश्वास करते हैं। सब के साथ मिलने के लिए उनके समान स्तर पर उतरना पड़ता है। तुम स्वयं किसी भी हालत में नीचे नहीं उतर सकते। तुम पर मैं इसलिए विश्वास करती हूँ। किसी स्त्री ने किसी पुरुष पर इतना विश्वास नहीं किया होगा। तुम अगर साधारण पुरुष होते तो एक साधारण स्त्री की भाँति मैं तुमसे डरती रहती। लेकिन तुम्हारा साथ भय से रहित है।'

'धिक्कार है इस भयरहितता को! भय होता तो कम-से-कम उस पुरुष को पाती तो। देश के लिए दुस्साहस का दावा करती हो, सो भला तुम क्यों न करोगी। क्योंकि तुम महीयसी हो, असल में मैं हूँ कापुरुष। जबकि समय

अपने हाथ में था तब मैं लोगों के कहने की परवाह न करके तुम्हें जबर्दस्ती हरण करके क्यों नहीं ले गया? भद्रता! प्रेम तो बर्बर होता है! अपना रास्ता बनाने के लिए पहाड़ तक हटा सकता है। वह तो जैसे पागल झरना होता है, शहरों के पालतू नल का पानी नहीं!'

एला फौरन उठ खड़ी हुई और बोली, 'चलो अंतू, अंदर चलो।'

अतीन भी उठकर खड़ा हो गया और बोला, 'डर! इतने दिनों बाद डर की शुरुआत हुई। मेरी ही जीत हो गई! पहले-पहल जब यौवन आया तब तक मैंने स्त्रियों को नहीं पहचाना था। कल्पना में मैंने उन्हें अपने लिए दुर्गम करके ही देखा था। अब यह प्रभावित करने का समय निकल गया कि तुम लोग जो चाहती हो वही मैं भी चाहता हूँ। भीतर से मैं पुरुष हूँ—उद्दाम और बर्बर। और मौका न चूका होता तो तुम्हें अभी अपने बज्र बंधन में जकड़ लेता—तुम्हारी पसलियाँ चरमरा उठतीं। तब मैं तुम्हें सोचने तक का समय न देता, रोने के लिए तुममें साँस भी न छोड़ता और निष्ठुर की तरह अपने कमरे में खींच ले जाता। लेकिन आज मैं जिस रास्ते पर आ पड़ा हूँ, वह तलवार की धार की तरह सँकरा और खतरनाक है, वहाँ दो व्यक्तियों के साथ-साथ चलने की जगह नहीं।'

'आज, मेरे दस्यु! जबर्दस्ती छीन ले जाने की जरूरत नहीं तुम्हें। लो, यह लो, मैं तुम्हारी ही हूँ।' यह कहते-कहते वह बाँहें फैलाए अतीन के पास पहुँच गई और आँखें मूँदकर उसके वक्ष से लगते हुए अपना मुँह उसके मुँह की ओर बढ़ा दिया।

खिड़की से एला की नजर सड़क की ओर जो गई तो वह सहसा चौंक पड़ी और बोली, 'सर्वनाश। वह देखो, देख रहे हो?'

'क्या?'

'उस मोड़ पर। निश्चय ही वह बूट है, यहीं आ रहा है।'

'आने लायक जगह वह जानता ही होगा।'

'उसे देखते ही मैं काँप उठती हूँ। उसके स्वभाव में स्थूल मांस और चर्बी का परिमाण काफी है। जितना ही मैं उससे बचने की कोशिश करती हूँ, अपने से उसे दूर रखना चाहती हूँ उतना ही वह पास आता जाता है। गंदा आदमी है वह, बड़ा गंदा है।'

'मुझे वह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता, एला।'

'उसके बारे में कुछ अनुचित कल्पना करने से मैं अपने को बराबर रोकने की कोशिश करती हूँ—लेकिन किसी तरह भी रोक नहीं पाती। दूर से ही उसकी लालायित आँखें अपने स्पर्श से जैसे मेरा अपमान करती रहती हैं।'

'तुम उसकी बिल्कुल परवाह न करो, एला। क्या मन में उसके अस्तित्व की उपेक्षा नहीं कर सकतीं?'

'मैं उससे डरती हूँ, इसीलिए वह ध्यान से हटाए नहीं हटता। उसका एक भीतरी चेहरा मुझे दिखाई देता है—जैसे बिल्कुल 'ओक्टोयस' (आठ पैरों वाली भयानक जल-मकड़ी) हो! लगता है, जैसे वह किसी दिन अचानक अपने आठों गंदे और चिपचिपे पैर निकालकर मुझे असम्मान से जकड़ लेगा। जैसे वह बराबर इसी षड्यंत्र में लगा हो। इस बात को तुम नासमझ औरतों की आशंका-सी मानकर हँसी में उड़ा सकते हो, लेकिन यह सच है कि वह भूत की तरह हमेशा मेरे सिर पर सवार रहता है। सिर्फ अपने लिए ही नहीं, मुझे तुम्हारे लिए उससे डर लगा रहता है—मैं जानती हूँ कि तुम्हारी और उसकी ईर्ष्या का फन फुफकार रहा है!'

'एला, ऐसे जानवरों में साहस नहीं होता, सिर्फ बदबू होती है। इसीलिए उन्हें छेड़ना नहीं चाहिए। लेकिन मुझसे वह मन-ही-मन बहुत डरता है। इसलिए नहीं कि मैं भयंकर हूँ, बल्कि इसलिए कि मैं उससे बिल्कुल भिन्न प्रकार का आदमी हूँ।'

'देखो अंतू, जीवन में मैंने अनेक प्रकार के दुःख और विपत्तियों की संभावना सोच रखी है और मैं उनके लिए तैयार भी हूँ—लेकिन इतना हमेशा चाहती हूँ कि किसी दिन किसी दुर्घटना से उसके पंजे में न जा फसूँ, इससे तो मौत ही भली।' कहते-कहते उसने अतीन का हाथ कसकर पकड़ लिया, जैसे उसे बचाने का समय आ ही पहुँचा हो।

'जानते हो अंतू, किसी हिंस्रक जंतु द्वारा अपमृत्यु होने की कल्पना जब कभी मन में आती है, तब ईश्वर से कहती हूँ कि शेर या भालू खा जाए तो ठीक है, लेकिन ऐसा कभी न हो कि मुझे मगर कीचड़ में खींच ले जाए और सड़ा-सड़ाकर खाए!'

'मेरी गिनती क्या तुमने शेर-भालुओं में की है?'

'नहीं जी, नहीं। तुम तो मेरे नर-सिंह हो, तुम्हारे हाथों मरने में ही मेरी

मुक्ति है! ...सुनो, पैरों की आहट आ रही है—वह ऊपर ही आ रहा है!'

अतीन ने कमरे से बाहर आकर जरा जोर से कहा, 'बटू, यहाँ नहीं। चलो, नीचे की बैठक में चलो!'

बटू बोला, 'एला दीदी—'

'एला दीदी अभी कपड़े बदलने गई हैं। आओ चलो, नीचे।'

'कपड़े बदलने? इतनी देर गए? साढ़े आठ—'

'हाँ-हाँ, मैंने ही देर करा दी थी।'

'सिर्फ एक बात है। पाँच मिनिट—'

'वे बाथरूम में गई हैं। कह गई हैं कि उनके अपने कमरे में कोई आए, यह उन्हें पसंद नहीं है।'

'और आप?'

'हाँ, मेरे सिवा।'

बटू ओंठों में ही मुस्कराया। उसका मुस्कराना बिल्कुल स्पष्ट और व्यंग्यपूर्ण था। उसने कहा, 'हम लोग हमेशा से (दल में) हैं सो तो व्याकरण के साधारण नियमों में ही बँधे रह गए, और आपको अभी आए दो दिन भी नहीं हुए कि आप चट से आर्ष प्रयोग में प्रवेश पा गए। 'एक्सेप्शन' (अपवाद) फिसलने का रास्ता है, ज्यादा दिन टिकने का नहीं—इसीलिए छोड़ दिया!' यह कहकर वह जूते खटकाता हुआ जल्दी-जल्दी नीचे चला गया।

हाथ में एक छोटी-सी आरी लिए अखिल आ पहुँचा और बोला, 'चिट्ठी है।' अपने काम को वह अधूरा छोड़कर चला आया था।

'तुम्हारी दीदी की?'

'नहीं, आपकी। आपके ही हाथ में देने को कहा है।'

'किसने?'

'मैं नहीं पहचानता।' और वह वहाँ से चला गया।

चिट्ठी के कागज का लाल रंग देखते ही अतीन समझ गया कि यह खतरे का सिगनल है। गुप्त भाषा में लिखी चिट्ठी उसने पढ़ी। उसमें लिखा था, 'एला के घर अब न रहो। उसे बताए बिना ही चले जाओ!'

कर्म के जिस शासन को उसने स्वीकार कर लिया था उस असम्मान को वह आत्मसम्मान के विरुद्ध ही समझता है। चिट्ठी को उसने बाकायदा

टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दिया। क्षण भर के लिए वह बंद बाथरूम के बाहर चुप-चाप खड़ा रहा। और फिर तेजी से वहाँ से चलता बना।

सड़क पर खड़े होकर एक बार उसने ऊपर खिड़की की ओर देखा। खिड़की खुली थी और उसमें से अरामकुर्सी का थोड़ा-सा हिस्सा दिखाई दे रहा था। उसके साथ ही लाल-पीली धारियोंवाले चौकोर तकिए का एक कोना भी दिखाई दे रहा था। अतीन चलती हुई ट्राम पर उछलकर सवार हो गया।

3

चारों ओर एक-दूसरे से सटे गहरे और हल्के हरे रंग के पेड़-पौधों और झाड़ियों की निविड़ता छाई हुई है। इधर-उधर कुछ गड्ढे हैं, जिनमें पानी के बजाय कीचड़ और बाँस की सड़ी पत्तियाँ भरी हैं। इस निविड़ता के बीच से एक टेढ़ी-मेढ़ी कच्ची सड़क गई है, जो बैलगाड़ियों के पहियों से बुरी तरह रौंदी गई है। कहीं आलू और अरबी बोई गई है, तो कहीं नागफनी और सेंहुड़ के जंगली पौधे लगे हैं। मेंड से घिरे हुए धान के खेतों में पानी भरा हुआ दिखाई दे रहा है। सड़क गंगा के किनारे तक जाकर खत्म हो गई है। पुराने जमाने की छोटी-छोटी ईंटों से बना हुआ घाट टूट-फूट कर तिरछा हो गया है। गंगा कुछ उतर गई है और सामने कुछ कछार पड़ गया है। घाट से कुछ दूर आगे चलकर गंगा के किनारे एक जंगल-सा पड़ता है। इसमें एक खंडहर-सा मकान है, जिसके बारे में आस-पास के लोगों में कहा जाता है कि उसकी अभिशप्त छाया में डेढ़ सौ साल पहले के किसी मातृ-हत्यारे पापी के भूत ने डेरा डाल रखा है। कई दिनों से किसी जीवित उत्तराधिकारी ने उस अशरीरी आत्मा के विरुद्ध अधिकार का दावा करने की कोशिश नहीं की।

इसी स्थान का दृश्य है—पूजा-गृह का गिरा-पड़ा दालान और उसके सामने ऊबड़-खाबड़ लंबा-चौड़ा आँगन, जिसमें जगह-जगह काई जमी हुई है। कुछ दूर नदी के किनारे, गिरने की हालत में खंडहर पड़ा मंदिर, टूटा-फूटा नृत्य-मंच और पुरानी दीवारों का भाग्नावशेष। कछार पर वटवृक्ष की

जटाओं में छिपी एक टूटी-फूटी नाव का ढाँचा पड़ा है।

फिलहाल यहीं पर अतीन का वास है। लगभग शाम को अतीन के उस छायाभरे दालान में कानाई गुप्त आ पहुँचे। अतीन चौंका, क्योंकि यहाँ का पता कानाई को मालूम नहीं होना चाहिए था।

'आप कहाँ?'

कानाई ने कहा, 'हाँ, जासूसी करने निकला हूँ।'

'मजाक को जरा समझाकर कहिए।'

'मजाक नहीं है। मैं तुम लोगों को रसद पहुँचानेवालों में से एक साधारण-सा आदमी हूँ। चाय की दूकान में शनिवार का प्रवेश हुआ और मुझे वहाँ से निकल आना पड़ा। अंत में उन्हीं के गुप्तचरों में नाम लिखा लिया। मरघट के अलावा जिनके लिए और कोई रास्ता नहीं, उनके लिए यह जैसे ग्रांडट्रंक रोड है, जो देश की छाती पर पूरब से लेकर पच्छिम तक चली गई है।'

'चाय बनाने का काम छोड़कर अब खबरें बना रहे हैं?'

'बनाने से यह रोजगार नहीं चलता। यहाँ तो शुद्ध, खालिश खबरें ही देनी पड़ती है। जो शिकार जाल में फँस चुका है, मैं उसकी फाँस भी निकाल दिया करता हूँ। तुम्हारे हरने की साढ़े पंद्रह आने खबरें उन तक पहुँच चुकी हैं, आखिरी ज्यादती की खबर भी मैंने दे दी है। वह इस समय जलपाईगुड़ी की सरकारी सराय में होगा।'

'अब शायद मेरी बारी है?'

'आसार तो ऐसे नजर आ रहे हैं। बटू ने बहुत-कुछ रास्ता साफ कर रखा है। मेरे हिस्से जितना काम सुपुर्द है, उसमें तुम्हें कुछ समय मिलेगा। पिछले मकान में रहते समय अचानक तुम्हारी डायरी खो गई थी—कुछ याद है?'

'हाँ, खूब याद है।'

'वह निश्चय ही पुलिस के हाथ लग जाती, इसलिए उसे मुझे ही चुराना पड़ा।'

'आपने चुराई?'

'यहाँ, जिसका संकल्प साधु होता है, उसके भगवान् सहायक होते हैं। एक दिन तुम उसमें कुछ लिख रहे थे—मेरे ही प्रयत्न से तुम कुछ देर के लिए उठकर बाहर चले गए, और इसी बीच मैंने उसे उड़ा लिया।'

'अतीन ने माथा ठोंककर कहा, 'तो पूरी पढ़ ली है आपने?'

'जरूर पढ़ी है। पढ़ते-पढ़ते रात के डेढ़ बज गए। अपनी बंगाली भाषा में इतना तेज और इतना रस है यह मैं पहले नहीं जानता था। उसमें बहुत-सी गुप्त बातें थीं; लेकिन वे ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ नहीं लिखी गई थीं।'

'तो आपने यह अच्छा काम किया?'

'कितना अच्छा किया यह तो मैं कह नहीं सकता। तुम तो साहित्यिक हो, तुमने डायरी भर में कहीं भी छोटी-मोटी या ऊहापोह की बातें नहीं लिखीं, और न किसी का नाम लिया है। हाँ, भावना की दृष्टि से देखा जाए तो उसमें इतनी घृणा और अश्रद्धा की बू आती है कि अगर किसी पेंशनयाफ्ता और मंत्री पद के लोलुप व्यक्ति की कलम से निकलती हो, उसे राज-दरबार में मोक्ष तक प्राप्त हो सकता था। बटू अगर तुम्हारे पीछे न भी पड़ता तो वह डायरी ही तुम्हारे लिए एक कुग्रह का काम करती।'

'क्या कह रहे हैं आप? सारी पढ़ डाली है आपने?'

'हाँ, पढ़ी तो पूरी ही है, क्या कहूँ, अगर मेरे लड़की होती और ऐसा समाहित्य अगर वह तुम्हारी कलम से लिखवा सकती तो अपने पितृपद को मैं सार्थक मानता। सच कहता हूँ, तुम्हें अपने दल में लेकर भैया इंद्रनाथ ने देश की हानि ही की है।'

'आपके इस नए रोजगार की खबर दल के सब लोगों को मालूम है?'

'न, किसी को नहीं।'

'मास्टर साहब को?'

'वे समझदार आदमी हैं। आसानी से अंदाज लगा सकते हैं। लेकिन उन्होंने मुझसे पूछा नहीं और मैंने भी आज तक नहीं बताया।'

'और आपने मुझे जो बता दिया है!'

'यही तो ताज्जुब की बात है। मुझ जैसा संदेही आदमी अगर किसी पर विश्वास नहीं कर पाता है तो उसका दम घुटने लगता है। मैं न तो भावुक हूँ और न मूर्ख ही हूँ, इसीलिए डायरी नहीं रखता। वरना, उसे तुम्हारे हाथ में सौंपकर मन का धुआँ निकाल लेता।'

'मास्टर साहब— ?'

'मास्टर साहब को खबर दी जा सकती है, लेकिन उनके आगे अपना

मन नहीं खोला जा सकता। इंद्रनाथ का मैं एक तरह से मंत्री हूँ, लेकिन इस भ्रम में कभी मत रहना कि उनकी सब बातें मुझे मालूम हैं। ऐसी बातें भी हैं जिनकी कल्पना करने की भी जरूरत नहीं पड़ती। मेरा विश्वास है कि हमारे दल में जो अपने आप ही लड़ने लगते हैं उन्हें इंद्रनाथ अपने बीच से निकालकर पुलिस के कूड़ेखाने में भेज देते हैं। यह काम है तो गर्हित लेकिन निष्पाप है। मैं पहले से ही कहे देता हूँ कि किसी दिन उनकी या मेरी ही सहायता से तुम्हारे हाथों में आखिरी बार हथकड़ी पड़ेगी—तब तुम कुछ ख्याल न करना। अच्छा! तुम्हारे यहाँ आने की खबर सबसे पहले बटू ने ही थाने में पहुँचाई थी। इसलिए मुझे उससे बाजी मारनी पड़ी। मैंने तुम्हारे फोटोग्राफ के साथ प्रामाणिक रूप से खबर पहुँचा दी। अच्छा, अब काम की बात कहता हूँ। तुम्हें मैं चौबीस घंटे का समय देता हूँ। इसके बाद भी अगर तुम यहाँ बने रहे तो मैं खुद तुम्हें थाने पहुँचा दूँगा। यहाँ से कहाँ जाना है, इसका विस्तार के साथ नक्शा बना दिया गया है। इन अक्षरों को तुम जानते ही हो फिर भी याद करके कागज फाड़ देना। लो, यह रहा नक्शा। रास्ते की इस ओर तुम्हारा डेरा रहेगा स्कूल के पास कोनेवाले मकान में। इसके ठीक सामने ही एक थाना है। थाने में तुम्हें एक राइटर कानस्टेबुल मिलेगा। दूर के रिश्ते में वह मेरा नाती लगता है। नाम है राघव दयाल। पछाँह में रहते हुए उसकी तीन पीढ़ी गुजर चुकी है। तुम्हें मास्टरी का काम सौंपा गया है। वहाँ पहुँचते ही राघव तुम्हारे ट्रंक वगैरह देखेगा, कपड़ों की तालाशी भी लेगा और हो सकता है दो-एक धौल भी जमा दे, जिसे तुम भगवान की दया समझकर स्वीकार कर लेना। राघव की हिंदी में हमेशा यह प्रकट होता रहता है कि बंगाली मात्र उसकी ससुराल के रहनेवाले हैं। लेकिन तुम उसका विरोध करने की कोशिश न करना और जीते-जी कभी इधर न आना। साइकिल बाहर रखी है, इशारा पाते ही चल पड़ना। आओ, बेटा, अब आखिरी बार गले मिल लें।'

उससे गले मिलकर कानाई वहाँ से चला गया।

अतीन चुपचाप बैठा रहा। वह अपने बारे में सोचने लगा। तो असमय में ही उसके जीवन-नाटक का अंत आ पहुँचा, यवनिका गिरना ही चाहती है, रोशनी बुझनेवाली है! उसने यात्रा शुरू की थी प्रभात के निर्मल प्रकाश में। आज वहाँ से वह कितनी दूर आ पहुँचा। चलते समय हाथ में जो पाथेय

था वह भी आज नहीं बचा। रास्ते की इस आखिरी मंजिल में तो उसने अपने को सिर्फ ठगकर ही पेट भरा है। एक दिन सहसा रास्ते के एक मोड़ पर सौंदर्य का अपूर्व दान लेकर जो भाग्यलक्ष्मी उसके सामने आ खड़ी हुई थी, कितनी अलौकिक थी वह! उसने आज तक कभी कल्पना तक नहीं की थी कि इतना असीम सौंदर्य वह कभी अपनी आँखों से भी देख सकेगा। केवल काव्य और इतिहास में ही ऐसा रूप सुनने में आया था। कई बार उसने मन में सोचा था कि इतालियन महाकवि दाँते और रुपसी बियात्रिचे हम दोनों के रूप में नया जन्म ले रहे हैं। उस ऐतिहासिक प्रेरणा ने ही उसके मन की बात को आगे बढ़ाया था। दाँते की तरह ही वह भी राष्ट्रीय क्रांति के भँवर में कूदा था—लेकिन वहाँ सत्य कहाँ, वीर्य कहाँ, गौरव कहाँ! देखते-देखते वह अनिवार्य वेग से जिस कीचड़ की ओर खिंचता चला गया, उस छद्‍मवेशी चोरी-डकैती और खून-खराबी के अंधकार में प्रकाश के आलोक-स्तंभ का कहीं पता नहीं था। अपनी आत्मा का सर्वनाश करके वह आज वह पा रहा है कि इस कार्य में असल में कोई भी फल हाथ नहीं लग सकता, और सामने निश्चित पराभव मुँह फाड़े खड़ा है। पराभव का मूल्य है, लेकिन आत्मा के पराभव का कोई मूल्य नहीं, उस पराभव का कोई मूल्य नहीं, जो उसे गुप्त रूप से विचरण करनेवाली उस विभीषिका में उसे खींच लाया है, जिसका न तो कोई अर्थ है और न अंत।

दिन का प्रकाश क्रमशः हल्का होता गया। आँगन में झींगुर बोलने लगे। पास ही कच्ची सड़क पर कोई बैलगाड़ी जा रही थी, जिसका आर्तस्वर सुनाई दे रहा था।

इतने में अचानक आँधी के वेग की तरह एला वहाँ आ पहुँची। वह इस तरह अव्यवस्थित और घबराई हुई-सी आई, जैसे आत्महत्या की झोंक में नदी में कूदना चाहती हो। अतीन उछलकर खड़ा हो गया और वह उसकी छाती पर आ गिरी। रुँधे हुए गले से वह बोली, 'अतीन, अतीन, मुझसे रहा नहीं गया!'

अतीन ने उसे धीरे से अपने से अलग किया और फिर सामने खड़ी करके कहा, 'एली, यह क्या कर डाला तुमने?'

'मुझे नहीं मालूम क्या किया मैंने?'

'यहाँ का पता कैसे मालूम हुआ तुम्हें?'

एला ने गहरे अभिमान के साथ उलाहने के स्वर में कहा, 'तुमने तो नहीं बताया अपना पता!'

'जिसने तुम्हें बताया वह तुम्हारा हितैषी नहीं है, एला!'

'यह भी मैं निश्चित रूप से जानती हूँ। लेकिन तुम्हारा कुछ पता मिलने पर मेरा मन खोया-खोया-सा रहने लगा और फिर यह मेरे लिए असह्य हो उठा। तब हितैषी-अहितैषी का विचार करने की अवस्था मेरी नहीं रही। कितने दिनों से तुम्हें देखा तक नहीं।'

'तुम धन्य हो!'

'धन्य हो तुम, अंतू! ज्यों ही मेरे घर आने की मनाही तुम्हें हुई कि तुमने उसे मान लिया! भला, यह तुमसे हो कैसे सका?'

'यह तो मेरी स्वाभाविक स्पर्धा है। प्रचंड इच्छा ने मुझे रात-दिन अजगर की तरह मरोड़-मरोड़ कर मारा है, लेकिन फिर भी मैंने उसे माना नहीं। वे लोग मुझे सेंटीमेंटल—भावुक कहते हैं। उन लोगों ने सोच लिया था कि संकट के समय यह प्रमाणित हो जाएगा कि मैं गीली मिट्टी का बना हूँ। वे यह सोच ही नहीं सकते कि भावुकता ही मेरी अमोघ शक्ति है।'

'मास्टर साहब भी इस बात को जानते हैं।'

'एली, इस भुतहे मोहल्ले की सृष्टि होने के बाद से आज तक किसी बंगाली महिला ने यहाँ कदम नहीं रखा होगा।'

'जिसका कारण यह है कि किसी भी बंगाली भद्र महिला को इतनी बड़ी आवश्यकता इतने दुस्सह रूप में अनुभव नहीं हुई थी।'

'लेकिन, एली, आज जो काम तुमने किया है वह तो अवैध है।'

'जानती हूँ यह, अपनी कमजोरी भी समझती हूँ मैं। फिर भी मैं नियम तोड़ूँगी, सिर्फ अपनी ओर से ही नहीं बल्कि तुम्हारी ओर से भी। रोज मेरा मन कहता था कि तुम बुला रहे हो मुझे। उसका जवाब दिए बिना मेरे प्राण चंचल होने लगते हैं। बताओ, मेरे आने से तुम प्रसन्न हुए हो?'

'इतना प्रसन्न हूँ कि उसे सिद्ध करने के लिए किसी भी खतरे में पड़ने को तैयार हो सकता हूँ।'

'नहीं, नहीं, तुम खतरे में क्यों पड़ोगे? जो कुछ आफत आए, मुझ पर आए। तो अब मैं जाती हूँ, अंतू!'

'कभी नहीं। तुम नियम तोड़कर चली आई हो तो मैं नियम तोड़कर तुम्हें

जकड़े रखूँगा। आओ, हम दोनों मिलकर अपराध को समान कर लें। एक दिन एक नए आश्चर्य के रूप में तुम्हारे वासंती मुख को देखा था, आज वह दिन जैसे युगांतर तक पिछड़ गया है। आओ, आज उस दिन का आह्वान किया जाए इस खंडहर में। आओ, और समीप आ जाओ। ठहरो, जरा अपना घर सँभाल लेने की कोशिश करूँ।'

'हाय, रहने भी दो। गंजे सिर में कंघी की क्या जरूरत?'

एला ने एक बार में नजर घुमाकर चारों ओर देखा। जमीन पर कंबल बिछा था और उस पर चटाई थी। तकिए की जगह किताबों से भरा कैनवस का एक पुराना झोला था। लिखने-पढ़ने के लिए चीड़ की लकड़ी का एक डिब्बा पड़ा था और एक कोने में सिकोरे से ढँकी गगरी रखी थी। एक टूटी टोकरी में कुछ केले पड़े थे और उसी में एक कटोरी पड़ी थी जिसका एनामेल कई जगह से निकल गया था और जो मौके-बेमौके चाय पीने के काम आती थी। दूसरे कोने में एक बड़ी-सी संदूक रखी थी। जिस पर गणेश की एक मिट्टी की मूर्ति विराजमान थी। इससे लगता था कि यहाँ अतीन का कोई और साथी भी रहता है। एक खंभे से दूसरे खंभे तक रस्सी बँधी है, जिस पर कई तरह के रंगीन और दाग लगे हुए कपड़े पड़े हैं। घर भर में सीलन की दम घोंटनेवाली गंध फैली हुई है।

बिल्कुल ऐसा तो नहीं, लेकिन लगभग ऐसे ही और भी कई दृश्य एला को देखने को मिले हैं। उससे उसे विशेष दुख भी कभी नहीं हुआ, बल्कि मन-ही-मन उसने उन त्यागवीर युवकों को शाबाशी भी दी थी। एक बार उसने किसी जंगल के किनारे किन्हीं नौसिखवे हाथों से बने हुए एक चूल्हे का भग्नावशेष देखा था, जिसके चारों और जले हुए चावल बिखरे पड़े थे। यह सब उसे जैसे राष्ट्रीय क्रांति के रोमांस की एक तस्वीर-सा लगा था, लेकिन आज तो दुख और वेदना से उसका गला भर आया। आराम से जीवन यापन करनेवाले धनी युवकों की अवज्ञा करना ही एला का स्वभाव था। लेकिन अतीन को इस मलिन अभावजन्य दरिद्रता में देखकर वह अपना मन न समझा सकी।

एला के उद्विग्न चेहरे की ओर देखकर अतीन हँसकर बोला, 'मेरे इस ऐश्वर्य को स्तंभित होकर देख रही हो। लेकिन उसका विराट अंश तुम्हें दिखाई नहीं देता इसीलिए कुछ विस्मित हो। हम लोगों को अपने पैर जरा

हल्के रखने पड़ते हैं ताकि भागते समय न किसी से रुकावट हो और न कोई टोक सके। कुछ दूर जूट मिल के मजदूरों की बस्ती है। वे लोग मुझे मास्टर बाबू कहते हैं। मुझसे चिट्ठी पढ़वा लेते हैं, लिखवा लेते हैं और लेने-देन की रसीद जँचवा लेते हैं। उन लोगों में से किसी-किसी को शौक है कि अपने लड़के को मजदूर की श्रेणी से ऊपर उठाकर हुजूर की श्रेणी में दाखिल करें। और इस काम में मेरी सहायता चाहते हैं। कोई भेंट में फल-फूल ले आता है और कोई गाय का दूध।'

'अंतू उस कोने में जो बड़ा सा संदूक पड़ा हैं वह किसका है?'

'गलत जगह पर और अकेला पड़ा होने के कारण ही वह इतना बड़ा दिखाई दे रहा है। अलक्ष्मी के प्रताप ने उसे यहाँ ला पटका है—एक मारवाड़ी का है, जो बेचारा तीसरी बार दिवालिया हुआ है। शायद दिवालिया होना ही उसका रोजगार है। यह खंडहर उसके दो भतीजों का ट्रेनिंग स्कूल है। दोनों लड़के बहुत तड़के सबेरे ही सत्तू खाकर यहाँ काम करने आते हैं। बस्ती की मजदूरिनों के लिए सस्ते दामों के कपड़े रँगते हैं और फिर उन्हें बेंचकर ब्याज और कुछ-कुछ मूलधन भी चुकाने का जुगाड़ करते हैं। ये जो मिट्टी की नाँदें देख रही हो, इन्हें मैं कोई अपने यज्ञ के काम में नहीं लाता, बल्कि ये उनके रंग घोलने के काम आती हैं। बेचने के लिए कपड़े उस संदूक में रखे जाते हैं। उनमें और भी औरतों के काम की चीजें रखी जाती हैं, जैसे बिलौरी चूड़ियाँ, कंघे, छोटे आईनें, बाजूबंद वगैरह। इस सारे सामानों की रक्षा करने का काम मुझ पर और इस मकान के भूतों पर है। वह व्यापारी दोपहर के बाद सौदा बेचने चला जाता है। बीच में यहाँ नहीं आता। कलकत्ते का मारवाड़ी है, न मालूम किस चीज की दलाली करता है। मुझे अंगरेजी पढ़ा-लिखा जानकर अपना साझेदार बनाना चाहता था, लेकिन बेचारे पर दया करके मैं राजी नहीं हुआ। मेरी आर्थिक स्थिति भी जानना चाहता था। मैंने बता दिया कि मेरे पुरखों के पास जो कुछ था वह उनके सजातियों के पुरखों के घर पहुँच चुका है।'

'यहाँ तुम्हारी कितने दिन की मियाद है?'

'अंदाजन चौबीस घंटे। इस आँगन की इन नाँदों में रंग की लीला बराबर जारी रहेगी, लेकिन अतीन विलीन हो जाएगा, पांडु वर्ण दूर दिगंत में। मैं तो यह मना रहा हूँ कि जिस मारवाड़ी को मेरी छूत लग गई, उसे कहीं हथकड़ी

रूपी महामारी न आ दबाए! अभी तक यह नहीं कहा जा सकता कि मूलधन के अभाव में यहाँ उसे मेरे भाग्य का भागी बनना पड़ेगा या नहीं।'

'तुम्हारा आगे का पता क्या होगा?'

'बताने का हुक्म नहीं है।'

'तो क्या मैं कल्पना भी नहीं कर सकूँगी कि तुम कहाँ हो?'

'कल्पना करने में क्या दोष है? रहने के लिए मानस-सरोवर का तीर अच्छा स्थान है!'

इस बीच एला उसके झोले से कुछ किताबें निकालकर उलट-पलट रही थी। कविता की किताबें थीं, कुछ अंगरेजी की और दो-चार बंगला की।

अतीन ने कहा, 'अब तक इन्हें मैं ढोता रहा हूँ इस डर से कि कहीं अपनी जात न भूल जाऊँ। इसी वाणी-लोक में मेरा आदि-निवास था। किताबों के पन्ने उलटते ही पेंसिल के चिह्न तुम्हें उन संकीर्ण मार्गों का पता बताएँगे जो मेरे मन तक जाते थे। और आज! आज यह देखो, आँखें खोलकर देखो!'

सहसा एला ने अतीन के पाँव पकड़ लिए और उन पर अपना सिर रख दिया, फिर बोली, 'मुझे माफ करो, अंतू। क्षमा करो मुझे!'

'तुम्हें माफ करने की इसमें कौन-सी बात है, एली? ईश्वर अगर है और उसमें असीम दया है तो वह अवश्य मुझे माफ करेगा।'

'अफसोस, जब तुम्हें जानती ही न थी, तब क्यों मैंने तुम्हें इस रास्ते पर लाकर खड़ा किया?'

अतीन हँसकर बोला, 'क्या मुझे इतना भी न मानने दोगी कि मैं अपने ही पागलपन से इस जगह था पहुँचा? मुझे नाबालिग-सा मानकर इस तरह मेरे अभिभावकों जैसा व्यवहार न करो। यह मुझसे सहन न हो सकेगा। इससे तो अच्छा यही है कि अपने ऊँचे मंच से नीचे उतर आओ और मेरे मुँह की ओर देखकर कहो—आओ प्रिय, मेरे आधे आँचल पर आ बैठो!'

'बहुत संभव है कि मैं ऐसा ही करती, लेकिन आज तुम इस तरह पागल क्यों हो उठे हो?'

'पागल न होऊँ? तुमने अभी कहा है न कि तुमने मुझे अपनी मृणाल रूपी भुजाओं के बल इस रास्ते पर खींचकर खड़ा किया है।'

'सही बात कहती हूँ तो नाराज क्यों होते हो?'

'सही बात कहती हो? मैं तो अपने हृदय के आवेश से इस मार्ग पर आ

पड़ा हूँ, तुम तो एक निमित्त मात्र हो। और किसी श्रेणी की महिला का निमित्त पाता तो अब तक किसी ऐंग्लो-इंडियन क्लब में ब्रिज खेलता होता, या घुड़दौड़ के मैदान में गवर्नर के बाक्स की ओर देखकर स्वर्ग की कल्पना करता। अगर किसी तरह यह सिद्ध हो जाए कि मैं मूर्ख हूँ तो कहूँगा कि मूर्खता स्वयं मेरी है, जिसे भगवान की ओर से मिली प्रतिभा कहा जाता है।'

'अंतू, इस तरह बेकार की बातें न कहो। इस दुःख को मैं कभी नहीं भूल सकती कि मैंने तुम्हारी जीविका के साधन को ही नष्ट कर दिया है। मैं तो देख रही हूँ कि जैसे तुम्हारे जीवन की जड़ ही उखड़ गई है।'

'इतनी देर बाद अब जाकर तुम्हारा यह रूप सामने आया जो कि तुम्हारा वास्तविक है। अगर मैंने सही समझा है तो मुझे लगता है कि देश-सेवा के रंगमंच पर तुम रोमांटिक भावना लेकर गई हो। तुम्हारा स्थान उस गृहस्थी में है, जिसमें फूल की थाली में दूध-भात परोसकर और बीजना डुलाकर लोगों को स्नेह से भोजन कराया जाता है। जहाँ राजनीतिक लट्ठबाज़ी है, वहाँ तुम्हारा उचित स्थान नहीं। वहाँ तुम अपनी सहज बुद्धि से नहीं बल्कि अप्रकृतिस्थ अवस्था की झाँक में, अनायास ही, अस्त-व्यस्त बाल बिखेरे और आँखें लाल किए आ पड़ती हो।'

'इतनी बात तुम कह सकते हो, अंतू! 'तुमसे तो स्त्रियाँ भी हार मान सकती हैं।'

'तो क्या स्त्रियों को बात करना आता है? वे तो सिर्फ बका करती हैं। इस सनातन मूढ़ता की दीवाल तोड़ने के लिए किसी दिन मन में बातों की भयंकर आँधी उठा करती थी। आज उसी मूढ़ता पर तुम अपनी जाति की ओर से जय-स्तंभ निर्मित करने चली हो।'

'पैरों पड़ती हूँ तुम्हारे, मुझे समझा तो दो कि आखिर मेरी भूल से तुमने क्यों भूल की? तुमने अपनी जीविका खोने का कष्ट क्यों स्वीकार किया?'

'वह तो मेरी व्यंजना थी, जिसे अंग्रेजी में 'जेस्चर' कहते हैं। वह मेरे अंतिम समय की भाषा थी। अगर मैं इस कष्ट को स्वीकार न करता तो तुम मुँह मोड़कर चली जाती और किसी तरह समझती ही नहीं कि मैं कितना चाहता हूँ तुम्हें। उस बात को यों मजाक में उड़ाकर यह न कहो कि वह देश के प्रति प्रेम था।'

'तो क्या इसमें देश नहीं है, अंतू?'

‘देश इसके बीच तभी आ सकता है जब यह माना जाए कि देश की साधना और तुम्हारी साधना एक हो गई है। एक दिन बल-वीर्य के जोर से, अपनी योग्यता दिखाकर स्त्री को प्राप्त करना पड़ता था। आज मुझे उसी मरण के प्रण को सिद्ध करने का अवसर मिला है। इस बात को भुलाकर जीविका के अभाव के इस तुच्छ प्रश्न ने तुम्हें कैसे चोट पहुँचाई है!’

‘हम स्त्रियाँ सांसारिक होती हैं। संसार में किसी को आकुल-व्याकुल देख नहीं पातीं। मेरी एक बात तुम्हें रखनी होगी। मेरे पास एक पुश्तैनी मकान है और कुछ रुपए भी जमा हैं। दुहाई है, मेरी बात रखो, मुझसे रुपए लेने में संकोच न करो। जानती हूँ, तुम्हें रुपए की बहुत जरूरत है।’

‘बहुत जरूरत पड़ने पर मैट्रिकुलेशन के लिए नोट की किताबें लिखने से लेकर मजदूरी तक का मौका खुला है।’

‘यह मैं मानती हूँ अंतू, कि मुझे अपने इकट्ठे किए हुए रुपए देश के काम में खर्च कर देने चाहिए थे लेकिन उपार्जन की योग्यता कम होने के कारण ही संचय के प्रति हमारी अंध-आसक्ति होती है। कुछ डरपोक होती हैं हम।’

‘यह तो तुम्हारी स्त्रीसुलभ सहज बुद्धि का उपदेश है। किसी प्रकार के संबल के अभाव में स्त्रियों का गौरव नष्ट हो जाता है।’

‘हमारा नीड़ संकुचित होता है, जिसमें छोटी-मोटी चीजें हम जमा करते रहते हैं, लेकिन वह केवल जीने के लिए ही नहीं, प्रेम के प्रयोजन के लिए भी। मेरा जो कुछ भी है वह सब तुम्हारे ही लिए है—इस बात को समझा सकी, तभी मुझे मुक्ति मिलेगी।’

‘इस बात को मैं हरगिज नहीं समझूँगा। आज तक स्त्रियों ने सेवा दी है और जीविका देने का काम पुरुष का रहा है। इसके विपरीत होने से हमारा सिर नीचा होता है। जिस चाहना के लिए निःसंकोच होकर तुम्हारे सामने हाथ पसार सकता हूँ उसकी उपेक्षा करके तुमने अपने प्रण का बाँध खड़ा कर रखा है। उस दिन जब तुम अपने नारायणी स्कूल का हिसाब-किताब मिला रही थी, तब मैं तुम्हारे पास आ बैठा था, उसी तरह तूफान की चोट खाकर चील जमीन पर आ गिरती है। चोट खाया हुआ मन लेकर आया था मैं तब। कर्तव्य की बेकार की छाप जिन चीजों पर लगी होती है उनके प्रति स्त्रियों की वैसी अटल भक्ति होती है जैसी पंडों के पैरों के प्रति यात्रियों की। उसे

छुड़ा पाना संभव नहीं होता। तुमने मुँह उठाकर देखा तक नहीं। मैं बैठे-बैठे एकटक देखता रहा, इच्छा हुई कि तुम्हारी उन सुकुमार उँगलियों से मेरे तन-मन पर स्पर्श-सुधा बरस पड़े। लेकिन तुम्हें जरा भी दर्द नहीं आया। कृपण, उतना भी न दे सकी। मन-ही-मन मैंने सोचा कि शायद और भी ज्यादा कीमत देनी होगी। किसी दिन जब फूटा हुआ सिर और खून से लथपथ देह लेकर जमीन पर गिर पड़ूँगा तब तो उस टूटे हुए हृदय को तुम अपनी गोद में ले ही लोगी।'

एला की आँखें भर आईं। बोली, 'उफ्' तुमसे जीत पाना कठिन है। तुमने तब मेरा रजिस्टर छीन क्यों नहीं लिया? तुम समझ नहीं पाते, तुम्हारा संकोच ही मुझे भी संकुचित कर देता है। अंतू, एक बात में तुम्हारा स्वभाव स्त्रियों से कुछ मिलता-जुलता है। प्रबल इच्छा होने पर भी अपनी माँग पेश करने में तुम्हारी रुचि तुम्हें रोकती है।'

'यह कुछ वंशगत बात है, बचपन से ही मेरे रक्त-मांस में समाई हुई है। मैंने बराबर सोचा है कि स्त्रियों के तन-मन में एक शुचिता की मर्यादा रहती है। कम-से-कम उनके शरीर के सम्मान की सशंक चित्त से रक्षा करना हमारा वंश-परंपरागत अभ्यास रहा है। मेरे कुंठित मन को थोड़ा सा प्रश्रय देने के लिए अगर तुम्हारा मन कभी भी पसीजे, तो मेरी ओर से भिक्षा माँगने की राह न देखना। मैंने उस तरह माँगना सीखा ही नहीं है। मेरी भूख की कोई सीमा नहीं, लेकिन इससे मैं उतावला नहीं बन सकता, मेरी प्रकृति में ही यह बात नहीं है।'

एला अतीन के और भी समीप आकर उससे लगकर बैठ गई। उसने अतीन का सिर अपने वक्ष से चिपका लिया और उस पर अपना सिर टेक दिया। धीरे-धीरे वह उसके बालों में उँगलियाँ फेरने लगी। कुछ देर बाद अतीन से सिर उठाया और एला के हाथ अपनी मुट्ठी में दबा लिए! वह बोला, 'जिस दिन मोकामा में जहाज पर सवार हुआ था, उसी दिन भाग्य देवी ने मेरे कान भर दिए, लेकिन मैं कुछ समझ नहीं सका था। उसके बाद से तो मेरा मन अपनी स्मृति के आँगन में केवल आकाश कुसुम का ही चयन करता रहा है। क्या उस दिन की बात तुम्हारे मन में पुरानी हो गई?'

'न, जरा भी नहीं।'

'तो सुनो। उसी दिन की बात है—नौकर मेरा सामान नीचे के डेक से

लुढ़काकर ले गया था। मेरे पास सिर्फ एक चमड़े का सूटकेस बच रहा था। मैं कुली की तलाश में इधर-उधर ताक रहा था। इतने में बहुत ही शिष्टाचार से तुमने पास आकर पूछा था—कुली चाहिए? क्या जरूरत है, मैं ही ले चलती हूँ। और घबराकर तुम्हें रोकते हुए मैंने अपना सूटकेस उठा लिया था। मुझे इस तरह संकोच में पड़ा देखकर तुमने कहा था, अगर संकोच मालूम होता हो तो मेरा संदूक वह पड़ा है, आप उसे उठा लीजिए। इस तरह दोनों ऋण से उऋण हो जाएँगे। और मुझे उठाना ही पड़ा। मेरे सूटकेस से सात गुना भारी था तुम्हारा संदूक। हैंडिल पकड़कर किसी तरह बार-बार हाथ बदलते हुए डगमगाता हुआ मैं थर्ड क्लास के डिब्बे तक पहुँचा और संदूक को भीतर रखा। मेरा रेशमी कुरता पसीने से तर हो रहा था और दम फूल रहा था। लेकिन तुम्हारे चेहरे पर एक चुप अट्टहास फैला हुआ था। हो सकता है कि करुण भी कहीं छिपी हो और उसे प्रकट करना तुमने अपना कर्तव्य न समझा हो। उस दिन मुझे आदमी बनाने का सेहरा शायद तुम्हारे ही माथे था।'

'छि:, यह सब न कहो। सोचकर भी मुझे लज्जा आती है। तब मैं कैसी थी, कितनी मूर्ख और अजीब-सी। तब तुम अपनी हँसी दबाए रहते थे, इसीलिए मैं इतनी सर चढ़ गई थी। तुमसे यह सब सहा कैसे जाता था? क्या इस बात की कोई जरूरत ही नहीं कि स्त्रियों के भी बुद्धि होनी चाहिए?'

'हो चाहे न हो, इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। उस दिन जिस परिवेष्ठन में तुम मुझे दिखाई दी थी वह न तो 'हायर मैथेमेटिक्स' था और न ही 'लाजिक'। वह तो था मोह। शंकराचार्य जैसे महामल्ल भी उसे जीत नहीं सके थे। शाम का समय था, आकाश में पतले-पतले बादल अपनी अंतिम विभूति का प्रदर्शन करने में लगे थे। गंगा का जल लाल आभा में लहरा था। उस दिन की वह चंचल पदगामी देह, उस रंगमय आलोक की पृष्ठभूमि में हमेशा के लिए मेरे हृदय में अंकित हो गई। इसके बाद? इसके बाद तो जैसे तुम्हारी पुकार मेरे कानों में गूँजने लगी। लेकिन अब आ कहाँ पहुँचा हूँ मैं! तुमसे कितनी दूर? भला तुम्हें मालूम भी है इसका हाल?'

'तुम मुझे जानने क्यों नहीं देते, अंतू?'

'तुम्हें सुनने की मनाही है। और, यही क्यों? क्या होगा, इन सब बातों को कहकर? आओ, उजाला कम हो गया है, और पास आ जाओ। आज मेरी आँखें तृप्त होने के लिए तुम्हारे दरबार में आई हैं। सिर्फ एक तुम्हारे पास ही

उनकी तृप्ति का साधन है। बहुत ही छोटा है उसका घेरा। क्यों न उसमें तुम्हारी तस्वीर मढ़वा लूँ? ये जो तुम्हारे दो-चार शरारती बाल बिखरकर आँखों पर आ पड़े हैं, इन्हें अपने चंचल हाथों से उठा क्यों नहीं देतीं? काली किनार की यह टसर की साड़ी, कंधे पर ब्रीच गायब है, माथे पर पिन से पल्ला बाल में अटका हुआ, आँखों से क्लांत व्यथा की छाया, ओंठों पर नम्र प्रार्थना का आभास और चारों ओर दिन का डूबता हुआ प्रकाश—यह सब जो देख रहा हूँ, बस, यही तो है वह अचरज भरा सत्य! इसका अर्थ क्या है यह मैं किसी को समझाकर कह नहीं सकता—किसी अत्यंत प्रतिभावान कवि के हाथ न लगने के कारण ही इसके अव्यक्त माधुर्य में इतना विषाद भरा है। इस छोटी-सी अपूर्व सुंदर परिपूर्णता को बड़े नाम और बड़ी छायावाली विकृति घेरे हुए है!'

'यह क्या कह रहे हो, अंतू!'

'काफी झूठ है यह। याद है, एक बार तुमने मुझसे मजदूरों की बस्ती में घर लेने के लिए कहा था। तुम मन में तय किए हुए थीं कि किसी तरह मेरे वंश के अभिमान को धूल में मिला दिया जाए। लेकिन तुम्हारे इस महाप्रयास में मुझे आनंद आने लगा। मैंने भी डेमोक्रेटिक ढंग की पिकनिक शुरू कर दी—गाड़ीवालों के मुहल्ले में घर लेकर रहने लगा। मैंने उनके बैलों और भैंसों के साथ-साथ उनसे भी भाई-चाचा का नाता जोड़ लिया। लेकिन उनसे भी छिपा न रह सका और न मुझसे इन झूठे रिश्तों की छाप का अधिक समय तक टिक पाना संभव है। ऐसे लोग भी हुए हैं, जिनका स्वर हर तरह के बाजों पर एक-सा ही बजा है, यहाँ तक कि धुनकी पर भी। लेकिन हम जब उनकी नकल करते हैं तो सुर नहीं मिल पाता। देखा नहीं तुमने अपने मुहल्ले के उस इसाई को, जो 'ब्रदर' कहकर हर किसी को अपने गले लगा लेता है! यह उसके अनुष्ठान का एक अंग मात्र है। असल में यह तो महात्मा ईसा का मजाक उड़ाना ही माना जाएगा।'

'तुम्हें आखिर हुआ क्या है, अंतू। किसी क्षोभ के कारण तुम यह सब कह रहे हो? क्या तुम यह कहना चाहते हो कि भीतर से अरुचि को निकाल देने पर भी कर्तव्य को कर्तव्य नहीं माना जा सकता।'

'रुचि की बात नहीं, एली, स्वभाव की बात है। अत्यंत अरुचि होने पर भी, श्रीकृष्ण ने अर्जुन से वीर का कर्तव्य करने के लिए कहा था, उन्होंने

कुरुक्षेत्र में खेती करने के लिए 'एग्रिकल्चरल एकोनामिक्स' की चर्चा करने को नहीं कहा था।'

'और तुम होते तो श्रीकृष्ण क्या कहते, अंतू?'

'यह तो उन्होंने बहुत दिन पहले से ही मेरे कान में कह रखा है। असल में मेरे कान में कही हुई उनकी बात को मुँह से कहने का भार तुम पर था। तुम्हारे गुरुजी ने, सिर्फ इस एक बात को कहने के लिए कि बिना किसी पक्षपात के सभी का एक ही कर्तव्य है, इतनी कृत्रिमता पैदा की है। मैं आज तुम्हारे सामने ही कहता हूँ कि उनके जिस मुहल्ले में तुम अहंकार के साथ अपनी इतनी विनम्रता दिखाने जाती हो, वहाँ तुम्हारे लिए भी जगह नहीं है। देवी! तुम लोग सब अपने को देवी मानती हो। अन्य दूसरी पोशाकों की तरह देवीपन की यह नकली पोशाक भी पुरुषों की दूकान में बनी है।'

'देखो अंतू, मैं आज तक नहीं समझ सकी कि जो मार्ग तुम्हारा नहीं है, उससे तुम कोशिश करके अलग क्यों नहीं हट आते!'

'तो कह दूँ। इस मार्ग पर पैर बढ़ाने के पहले बहुत-सी बातें नहीं जानता था, बहुत-सी बातें मैंने सोची तक नहीं थीं। यहाँ मैंने अपने आस-पास ऐसे बहुत से लड़कों को पाया, जो उम्र में अगर मुझसे छोटे न होते तो मैं उनके पैरों की धूल अपने सिर लगाता। मेरे सामने ही इन लोगों ने कितना कुछ नहीं देखा है। कितना सहा है इन्होंने, कितना अपमान हुआ है इनका। और ये असह्य बातें कभी किसी के सामने प्रकट भी नहीं होंगी। इस असह्य व्यथा ने ही मुझे पागल बना दिया है। मैंने प्रतिज्ञा की है कि मैं न तो भय से हार मानूँगा, न कष्टों से; पत्थर से सिर टकरा-टकरा कर मर जाऊँगा, लेकिन उस हृदयहीन दीवार की हँस-हँस कर ही उपेक्षा ही करता रहूँगा।'

'तो क्या उसके बाद तुम्हारी राय बदल गई?'

'सुनो तो। जो आदमी शक्तिशाली के विरुद्ध लड़ता है, वह साधनहीन होने पर भी उसके सामने तनकर खड़ा होता है, इससे उसके सम्मान की रक्षा होती है। इसी सम्मान के अधिकार की मैंने कल्पना की थी, ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे, मैंने अपनी आँखों देखा कि असाधारण रूप से उच्च विचार रखनेवाले लड़के अपना मनुष्यत्व खो रहे हैं। इससे बढ़कर और कोई हानि नहीं हो सकती। मैं निश्चित रूप से जानता था कि वे लोग मेरी बात को हँसी में उड़ा देंगे, लेकिन फिर भी मैंने उन लोगों से कहा कि अन्याय के विरोध

में अन्यायकर्ता के समान हो जाना ही हमारे लिए हार है। पराजय के पहले, मरने के पहले हमें सिद्ध कर जाना होगा कि हम मानव-धर्म में उनसे बड़े हैं, वरना इतने शक्तिशाली के विरुद्ध हारने के लिए खड़े होने का यह खेल ही क्यों? क्या मूर्खतापूर्वक आत्मघात करने के लिए? ऐसा नहीं है कि मेरी बात को उनमें से किसी ने समझा ही नहीं। लेकिन आखिर समझा भी तो कितने लोगों ने?'

'तो फिर तब ही उन लोगों को तुमने छोड़ क्यों नहीं दिया?'

'कैसे छोड़ता? तब तक तो सब-के-सब दंड के निष्ठुर जाल में फँस चुके थे। मैंने उनका इतिहास देखा और उसकी मर्मांतक वेदना को समझ लिया इसींलिए क्रोध करूँ या घृणा करूँ अब इन विपत्ति में फँसे हुए लोगों को छोड़ नहीं सकता। लेकिन एक बात मुझे इस अनुभव से पूरी तरह से समझ में आ गई कि शारीरिक बल में हम जिनके बिल्कुल बराबर नहीं, उनके साथ मल्लयुद्ध करने से हमारी स्थिति शोचनीय हो उठेगी। रोग हर तरह के शरीर के लिए दुखदाई होता है, लेकिन क्षीण शरीर के लिए तो वह घातक ही है। मनुष्यत्व का अपमान करके भी वे ही लोग कुछ दिनों तक जय का डंका बजाते हुए चल सकते हैं, जिनके पास बाहु-बल है। हम तो इस तरह नहीं चल सकते। इस प्रकार तो हम सिर से पैर तक कलंक से काले होकर बदनामी के अँधेरे में, पराभव के अतल गर्त में समा जाएँगे।'

'कुछ दिनों से इस भयानक दुखांत का रूप मेरे सामने भी स्पष्ट हुआ जा रहा है, अंतू। मैं तो गौरव का आह्वान पाकर मैदान में उतरी थी। लेकिन अब तो दिनोदिन लज्जा ही बढ़ती जा रही है। अब क्या करूँ, कुछ बताओ मुझे।'

सभी के सामने धर्मक्षेत्र है और धर्मयुद्ध है। और उसमें है—मृतौ वापि तेन लोकत्रयं जितम्। परंतु हम कुछ लोगों के लिए इस यात्रा में उस क्षेत्र का मार्ग बंद है। यहाँ का कर्मफल हमें यहीं पूरी तरह चुका जाना होगा।'

'सब समझ रही हूँ, अंतू। लेकिन फिर भी अपने देश के काम के बारे में तुम कुछ दिनों से ऐसे धिक्कारपूर्ण शब्दों में बात करते हो कि मुझे चोट पहुँचती है।'

'इसका कारण क्या है, इसे अगर अभी न भी कहूँ तो कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि उसका समय बीत चुका है।'

'फिर भी कहो तो।'

'मैं आज तुम्हारे सामने स्वीकार करूँगा कि तुम लोग जिसे देशभक्त कहते हो, उस तरह का देशभक्त मैं नहीं हूँ। जो कुछ देशभक्ति से भी बड़ा है उसे जो लोग सर्वोच्च नहीं मानते, उनकी देशभक्ति जैसे मगर की पीठ पर चढ़कर नदी पार करने के समान है। मिथ्या आचरण, नीचता, आपस में अविश्वास, क्षमता पाने के लिए षड्यंत्र करना, जासूसी मनोवृत्ति—यह सब उन्हें एक दिन नीचे कीचड़ में खींच ले जाएँगे। यह सब मैं बिलकुल साफ देख रहा हूँ। इस अंधे कूप के भीतर की भद्दी दुनिया में रात-दिन झूठ की जहरीली हवा चल रही है। इसमें रहकर अपने इस पौरुष की रक्षा नहीं की जा सकती, जिससे संसार में कोई बड़ा काम किया जा सकता है।'

'अच्छा अंतू, तुम जिसे आत्मघात कहते हो, क्या वह सिर्फ हमारे ही देश में है?'

'यह मैं नहीं कहता। देश की आत्मा को मारकर देश के प्राण बचाए जा सकते हैं, इस भयानक असत्य को आजकल संसार भर के राष्ट्रवादी पाशविक गर्जना के साथ घोषित करना चाहते हैं। इसका प्रतिवाद मेरे मन में एक असह्य आवेग के साथ उठता है। अपनी इस बात को मैं शायद साफ-साफ कह भी सकता था, और अगर इसे कह पाता तो यह सुरंग के भीतर छिपकर चोरी-चोरी देशोद्धार की कोशिश करने से कहीं बढ़कर काम होता। लेकिन इस जन्म में यह सब कहने का समय नहीं मिला। मेरी वेदना इसी से आज इतनी निष्ठुर हो उठी है।'

एला ने एक गहरी साँस ली और कहा, 'लौट आओ, अंतू!'

'अब लौटने का रास्ता ही नहीं रहा।'

'क्यों नहीं रहा?'

'अगर गलत जगह जा पड़ूँगा तो। वहाँ भी तो अंत तक मुझे अपनी जिम्मेदारी निभानी चाहिए।'

एला ने अतीत के गले से लिपटकर कहा, 'लौट चलो इस पथ से, अंतू! इतने वर्षों से मैंने जिस विश्वास से अपना घर बनाया था, उसकी दीवार आज तुमने तोड़ दी। आज मैं जैसे बहती हुई फूटी नाव को पकड़े बैठी हूँ। मुझे भी अपने साथ उद्धार करके ले चलो। इस तरह चुप होकर न बैठो, अंतू! बोलो, मुझे आज्ञा दो, मैं अपना प्रण तोड़ दूँगी। मैंने गलती की है। मुझे माफ करो।'

'अब कोई उपाय नहीं है।'

'क्यों कोई उपाय नहीं? जरूर है।'

'बाण लक्ष्यभ्रष्ट हो सकता है, लेकिन फिर तरकस में नहीं लौट सकता।'

'मैं स्वयंवरा हूँ, मुझसे विवाह कर लो, अंतू! अब और समय नष्ट न करो—गांधर्व विवाह करो और मुझे भी सहधर्मिणी बनाकर अपने साथ में ले चलो अपने मार्ग पर।'

'मार्ग अगर विपत्ति का होता तो मैं साथ ले जाता। लेकिन जहाँ धर्म नष्ट हुआ हो, वहाँ मैं तुम्हें अपनी सहधर्मिणी नहीं बनाना चाहता। खैर, जाने दो इन बातों को। इस जीवन की नाव डूबने के बाद अब भी कुछ सत्य बाकी रहा है, अब उसी की बात तुमसे सुनना चाहता हूँ।'

'तो बताओ, क्या कहूँ?'

'कहो कि तुम मुझसे प्रेम करती हो।'

'हाँ, करती हूँ।'

'कहो कि मैं तुमसे प्रेम करती हूँ, यह बात जब मैं नहीं रहूँगा तब भी तुम्हें याद रहेगी।'

एला निरुत्तर होकर चुप बैठी रही। उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे। बहुत देर बाद रुँधे हुए गले से कहा, 'मैं फिर कहती हूँ, अंतू, अंतू' तुम कुछ लो मुझसे—लो, यह मेरे गले का हार ही ले लो!' यह कहकर उसने अपना हार उतारकर अतीन के पैरों के पास रख दिया।

'नहीं, बिल्कुल नहीं।'

'क्यों, अभिमान?'

'हाँ, अभिमान। जब दिन थे, तब देतीं तो लेकर अपने गले में डाल लेता। लेकिन आज मेरी जेब के लिए दे रही हो, गरीबी के गड्ढे में उसे डाल रही हो! मैं तुम्हारे हाथ से भिक्षा नहीं लूँगा।'

एला अतीन के पैरों पर लोट गई और बोली, 'मुझे अपनी बना लो—अपनी संगिनी बना लो!'

'लालच न दो, एला। कई बार कह चुका हूँ कि मेरा पथ तुम्हारा पथ नहीं!'

'तो वह तुम्हारा पथ भी नहीं है। लौट आओ उस पथ से!'

'पथ मेरा नहीं, मैं ही पथ का हूँ। गले की फाँस को कोई भी गले का

गहना नहीं कहता।'

'अंतू, तुम यह निश्चित रूप से जानते हो कि तुम्हारे चले जाने के बाद मैं एक क्षण भी नहीं जी सकूँगी। तुम्हारे सिवा मेरा और कोई नहीं है। अगर तुम आज इस बात पर संदेह भी करोगे—तो मैं अपने पूरे मन से आशा करती हूँ कि फिर मेरे मरने के बाद उस संदेह को निर्मूल करने का कोई-न-कोई कारण तुम्हें अवश्य मिलेगा'

अचानक अतीन उछलकर खड़ा हो गया। तीर के समान तेज सीटी की आवाज कहीं दूर से आई। वह चौंककर बोला, 'अच्छा, चल दिया मैं!'

एला उससे लिपटकर बोली, 'मैं तुम्हारी हूँ—तुम्हारे चरणों की सेविका। मुझे छोड़कर न जाओ, न जाओ!'

अतीन क्षण भर ठिठककर खड़ा रह गया। तभी दूसरी सीटी की आवाज आई। अतीन गरजकर बोला, 'छोड़ दो, मुझे।'

और वह अपने को छुड़ाकर वहाँ से चला गया।

संध्या का अंधकार बढ़ता आ रहा है। एला जमीन पर औंधी पड़ी है। उसका हृदय सूख गया है, और आँखों में आँसू भी नहीं हैं। उतने में किसी ने गंभीर स्वर में पुकारा, 'एला।'

एला चौंककर उठ बैठी। उसने देखा, हाथ में टार्च लिए इंद्रनाथ सामने खड़े हैं। वह फौरन उठकर खड़ी हो गई और बोली, 'अंतू को लौटा लाइए।'

'छोड़ो इस बात को! बताओ, यहाँ क्यों आई थी?'

'विपत्ति आनेवाली है, यह जानकर ही आई।'

तीव्र भर्त्सना के स्वर में इंद्रनाथ ने कहा, 'तुम्हारी विपत्ति की किसे पड़ी है! यहाँ की खबर किसने दी थी तुम्हें?'

'बटू ने।'

'तब भी मतलब समझ में नहीं आया?'

'समझने की बुद्धि मुझमें नहीं थी। जी काँपने लगा था।'

'तुम्हें मार सकता, तो अभी मार डालता। जाओ, घर लौट जाओ। टैक्सी बाहर खड़ी है।'

4

'अखिल, फिर आ गए! बोर्डिंग से भाग आए? तुमसे पार पाना मुश्किल है। बार-बार कह दिया, इस घर में न आया करो। किसी दिन कहीं मारे न जाओ।'

अखिल ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया और स्वर को धीमा करके कहा, 'एक कोई दाढ़ीवाला आदमी पीछे से दीवार लाँघकर बगीचे में घुस आया है। इसीलिए मैंने तुम्हारे कमरे का दरवाजा भीतर से बंद कर लिया है। सुनो, किसी के पैरों की आवाज आ रही है।'

यह कहकर अखिल अपने कई फलवाले चाकू का सबसे बड़ा फल खोलकर तैयार हो गया।

एला बोली,'अरे बहादुर, इस तरह चाकू तानने की जरूरत नहीं हे। लाओ, इसे मुझे दे दो।' उसने उसके हाथ से चाकू छीन लिया।

तभी जीने से आवाज आई, 'कोई डर नहीं है, मैं हूँ—अंतू!'

सुनते ही एला के चेहरे का रंग उड़ गया। उसने कहा, 'अखिल, दरवाजा खोल दो।'

दरवाजा खोलकर अखिल ने पूछा, 'वह दाढ़ीवाला कहाँ गया?'

'दाढ़ी तो बगीचे में ही मिल जाएगी, और बाकी का आदमी यहीं मौजूद है। जाओ, दाढ़ी ढूँढ़ ले आओ तो।'

अखिल चला गया।

एला पत्थर की मूर्ति की तरह एकटक अतीन को देखती रही। फिर बोली, 'अंतू, यह कैसी शकल बना रखी है!'

'क्यों, अच्छी नहीं है?'

'तो क्या सचमुच— ?'

'सचमुच क्या है?'

'तुम्हें किसी सत्यानाशी रोग ने जकड़ लिया है?'

'कई तरह के डॉक्टरों का कई तरह का मत है—उनकी बात पर विश्वास न करने से भी काम तो चल ही सकता है।'

'निश्चित ही तुमने कुछ खाया-पीया नहीं है।'

'छोड़ो इस बात को, समय नष्ट न करो।'

'क्यों आए तुम यहाँ, अंतू। क्यों आए? ये लोग तो तुम्हें पकड़ने की राह

देख रहे हैं।'

'उन्हें निराश नहीं करना चाहिए।'

अतीन का हाथ पकड़कर एला ने कहा, 'आखिर क्यों आए हो तुम इस निश्चित विपत्ति के बीच फँसने, क्यों आए हो? अब क्या होगा? कोई रास्ता है?'

'क्यों आया हूँ, इस बात को मैं जाने के ठीक पहले कहता जाऊँगा। इस बीच, जितनी देर हो सके, उस बात को भुलाए रखना चाहता हूँ। बीच के सब दरवाजे बंद कर आता हूँ।'

कुछ देर बाद फिर ऊपर आकर वह बोला, 'चलो, छत पर चलें। मैं नीचे की सब बत्तियाँ जला आया हूँ। तुम डरो मत।'

'दोनों छत पर पहुँचे, और फिर जीने का दरवाजा बंद कर लिया। अतीन बंद दरवाजे से पीठ लगाकर बैठ गया और एला उसके सामने आ बैठी।

'एला, अपने मन को जरा स्वाभाविक अवस्था में ले आओ। समझो, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। जैसे हम दोनों लंका कांड आरंभ होने के पहले सुंदर कांड में हैं। तुम्हारे हाथ ऐसे बरफ से ठंडे क्यों हो रहे हैं? ये तो काँप रहे हैं! लाओ, गरम कर दूँ।'

एला के दोनों हाथ लेकर अतीन ने अपने कुरते के नीचे छाती से लगा लिया। उस समय दूर किसी जगह ब्याह की शहनाई बज रही थी।

'डर रही हो, एली?'

'किससे डर?'

'हर कुछ से। क्षण-क्षण से।'

'डर सिर्फ तुम्हारे लिए है, अंतू। और किसी बात का डर नहीं।'

अतीन बोला, 'एली, जरा कल्पना करने की कोशिश तो करो, जैसे हम लोग पचास या सौ साल आगे की किसी निस्तब्ध रात्रि में हैं। वर्तमान की चहारदीवारी बहुत ही सँकरी है, इसमें भय-चिंता, दुःख-कष्ट सभी कुछ बहुत रूप में दिखाई देते हैं। वर्तमान तो जैसे नकाब पहनकर हमें डराता है— जैसे हम उसके क्षणों की गोद में खेलनेवाले नादान बालक हैं। मृत्यु इसकी इस नकाब को उतार फेंकती है। वह कभी अत्युक्ति नहीं करती। जिस वस्तु को मैंने बहुत ज्यादा चाहा था, उस पर इसी वर्तमान की लेखनी ने कीमत की एक मोटी रकम लिख रखी है, और जिस वस्तु को मैंने खो दिया है

उस क्षणिक पर काल की स्याही ने असीम दु:ख का लेबिल लगा रखा है। झूठ बात है यह! जैसे जीवन ही जालसाजी कर रहा है—वह अनंत काल के हस्ताक्षरों को जाली बनाकर अपने नाम से चलाना चाहता है। मृत्यु आकर इस खेल पर हँसती है और सारे कागजों को गायब कर देती है। उसकी वह हँसी न तो निष्ठुर है और न व्यंग्यपूर्ण ही। वह तो शिव के हास्य के समान है—मोहताभि के अवसान का शांत और सुंदर हास्य। एली, कभी तुमने रात में अकेले बैठकर मृत्यु की स्निग्ध और गंभीर मुक्ति का अनुभव किया है, जिसमें चिरकाल की क्षमा रहती?'

'तुम्हारी भाँति विराट् रूप में देखने की शक्ति मुझमें नहीं है, अंतू। फिर भी ज़ब तुम्हारी याद के कारण मन उद्वेग से भर उठता है तब मैं यह बहुत ही स्पष्ट अनुभव करने की कोशिश करने लगती हूँ कि मरना आसान है।'

'डरपोक हो तुम, इस तरह मृत्यु को भागने का एक रास्ता क्यों मान रही हो? अगर सबसे निश्चित कोई चीज है तो वह है मृत्यु। जीवन सारे गति-स्रोतों का सागर है, इसमें सारे सत्य-असत्य और भले-बुरे का समन्वय हुआ है। आज की इस रात में अभी हम दोनों ही उस विराट् की फैली हुई भुजाओं के घेरे में हैं—याद हैं तुम्हें इब्सन की वे चार पंक्तियाँ—

ऊपर—
शिखरों की ओर,
नक्षत्रों की ओर,
विराट निस्तब्धता के पार!'

एला अतीन का हाथ अपनी गोद में लिए चुपचाप बैठी रही। सहसा अतीन हँस पड़ा और बोला, 'पीछे असीम में मृत्यु का काला परदा पड़ा हुआ है और उसी पर जीवन का कौतुक-नाट्य अपने अंतिम अंक की ओर बढ़ा जा रहा है। उसी का एक दृश्य आज ध्यान से देख लो। आज से तीन साल पहले इसी छत पर तुमने मेरे जन्मदिवस पर उत्सव मनाया था। याद है?'

'हाँ, खूब याद है?'

'उसमें तुम्हारे प्रशंसक युवकों का पूरा जमघट था। भोज के आयोजन में कोई खास धूम नहीं थी? भुने हुए चिवड़े थे और उबली हुई मटर थी, ऊपर से नमक-मिर्च पड़ी थी। अंडे के बड़े भी थे—याद है न? सबने मिलकर छीन-झपटकर खाया था। अचानक मोतीलाल ने हाथ-पैर सेंकते

हुए अपना लेक्चर शुरू कर दिया था, 'आज नवयुग में अतीन बाबू के नवजन्म का दिन...' और मैंने लपककर उसका मुँह बंद कर दिया था और कहा था कि अगर लेक्चर शुरू करोगे तो तुम्हारे पुराने जन्म का यहीं अंत कर दूँगा। बटू तब बोला था, 'छिः छिः, अतीन बाबू, भाषण की यह भ्रूणहत्या!' नवयुग, नवजन्म, मृत्यु का तोरण, जैसे अच्छे बँधे हुए फिकरे सुनकर मुझे शर्म आने लगती है। उन लोगों ने मेरे मन पर अपने दल का रंग चढ़ाने की जी-जान से कोशिश की—और फिर भी सफल न हो सके।'

'अंतू, असल में मैं ही नादान हूँ। मैंने ही सोचा था कि शायद वर्दी पहनकर मैं तुम्हें अपने दल के प्यादों में शरीक कर सकूँगी।'

'इसीलिए तुम मुझे दिखा-दिखाकर उन लोगों के बीच घुलती-मिलती और अपना बहनापा दिखाने की कोशिश करती थी। तुमने सोचा होगा कि मेरे सुधार के लिए कुछ ईर्ष्या की भी आवश्यकता है! स्नेह-जतन,कुशल-संभाषण, विशेष प्रकार की मंत्रणा, अनावश्यक उद्वेग वगैरह को तुमने बिसाती की तरह उनके आगे सजा रखा था। आज भी मुझे तुम्हारा वह करुण प्रश्न याद है, 'तुम्हारा चेहरा लाल क्यों हो रहा है?' भलमनसाहत में सिर दर्द से इनकार करने ही जा रहा था कि माथे पर रखने के लिए भीगे कपड़े की पट्टी आ पहुँची। मैं मुग्ध हो सकता था; लेकिन साथ ही यह भी समझ जाता कि यह तुम्हारी अति 'बहनजी-वृत्ति' भारतवर्ष की एक खास फरमाइशी चीज है, आदर्श स्वदेशी 'बहनजी वृत्ति!'

'ओह, चुप रहो, अंतू।'

'कई तरह की फालतू बातों की भरमार भी थी, तुममें उन दिनों काफी हास्योत्पादक ढोंग-सा था—यह मानना पड़ेगा।'

'मानती हूँ, मानती हूँ, हजार बार मानती हूँ। तुमने ही उन सारी बातों को दूर किया है। तो फिर आज क्यों इस तरह निष्ठुरता से कड़ुई-कड़ुई सुना रहे हो?'

'किस मनस्ताप से यह सब कह रहा हूँ, यह तो सुन लो। तुम उस दिन इसलिए मुझसे माफी माँग रही थी कि तुमने मेरी जीविका नष्ट की है। मैं जीवन के यथार्थ पथ से भटका और उस सर्वनाश के बदले में तुमसे जो कुछ माँग रहा था, उसे भी न पा सका। मैंने अपने स्वभाव को तोड़ डाला—और कुसंस्कारों से अंधी हुई तुम अपने एक प्रण को भी नहीं तोड़ सकीं, ऐसे प्रण

को, जिसमें सत्य नहीं था। तुम्हारे लिए माफी माँगना कौन-सी विशेषता रखता है? मैं जानता हूँ, तुम यही सोच रही हो कि आखिर मुझसे यह सब कैसे संभव हुआ, है न?'

'हाँ, अंतू, मेरा आश्चर्य किसी प्रकार भी कम नहीं होता—मैं नहीं जानती कि मुझमें ऐसी कौन-सी शक्ति थी।'

'तुम कैसे जान सकोगी? तुम लोगों की शक्ति तुम्हारी निजी नहीं है, वह महामाया की शक्ति है। कैसे आश्चर्यजनक स्वर है तुम्हारे कंठ में, वह मेरे मन में जैसे नीहारिका की तरह छा जाता है। और तुम्हारे ये हाथ, तुम्हारी ये उँगलियाँ सत्य-असत्य सब पर जैसे पारसमणि छुआ सकती हैं। पता नहीं किस मोह के वेग से मैंने अपने को धिक्कारते हुए भी इस स्खलित जीवन के असम्मान को अपना लिया। ऐसे संकटग्रस्तों की बातें पढ़ी तो बहुत है, लेकिन यह तो मैं सोच ही नहीं सकता था कि मुझ जैसा बुद्धिअभिमानी व्यक्ति भी कभी ऐसी दुर्घटना में फँस सकता है। अब इस जाल को तोड़ने का समय आ गया है। इसलिए आज मैं तुम्हें सच्ची बातें सुनाऊँगा, चाहे वे कितनी ही कठोर क्यों न हों?'

'कहो, कहो, जो भी कहना हो, उसे कह डालो। दया न करना मुझ पर। मैं निर्मम हूँ, मूढ़ हूँ—तुम्हें पहचानने की शक्ति मुझमें कभी भी नहीं रही। जो अमूल्य था, अतुलनीय था, वही हाथ बढ़ाकर मेरे सामने आया था। मैं अयोग्य हूँ, उसका सम्मान न कर सकी, उसे मूल्य न दे सकी। इतना बड़ा सौभाग्य का धन जीवन भर के लिए हाथ से चला गया। इससे भी बढ़कर कड़ी सजा और क्या होगी—अगर हो तो मुझे दो, वही दो।'

'रहने दो, रहने दो।' सजा की बात न करो। क्षमा ही करूँगा मैं। मृत्यु जैसी क्षमा देती है, उसी प्रकार की असीम क्षमा। इसीलिए तो आज आया हूँ।'

'इसीलिए?'

'हाँ, सिर्फ इसीलिए।'

'क्षमा न करते तो न सही। लेकिन इस तरह आग में कूदने क्यों आए? जानती हूँ, अच्छी तरह जानती हूँ, जीने की इच्छा नहीं है तुममें अब। अगर यही बात है तो अपने ये बचे हुए कुछ दिन मुझे ही दे दो। मुझे अपनी सेवा करने का अधिकार दो। तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ।'

'क्या होगा सेवा से? जीवन के इस फूटे घड़े में सुधा डालोगी? तुम

जानती हो कि कैसा असह्य क्षोभ है मुझे। सेवा-सुश्रूषा से उस आदमी का क्या कर सकती हो, जिसने अपना सत्य खो दिया हो?'

'सत्य नहीं खोया, अंतू। सत्य तो तुम्हारे हृदय में अक्षुण्ण बना हुआ है।'

'खो चुका हो वह।'

'न, ऐसा न कहो।'

'मैं क्या हूँ, अगर इस बात को तुम जान पातीं तो सिर से पैर तक काँप उठतीं।'

'अंतू, तुम अपनी कल्पना से आत्म-निंदा को बढ़ा रहे हो। जो कुछ तुमने निष्काम भाव से किया है, उसका कलंक तुम्हारे स्वभाव पर नहीं लग सकता।'

'मैंने तो स्वभाव की ही हत्या कर डाली है। सारी हत्याओं से बढ़कर महापाप है। मैं किसी भी अहित को समूल नष्ट नहीं कर सका, जड़-मूल से मैंने सिर्फ अपने को ही मारा है। उसी पाप के कारण आज तुमको अपने हाथ में पाकर भी मैं अपने को तुमसे मिला नहीं पाता। पाणिग्रहण। इन हाथों से। लेकिन अब इन बातों का महत्त्व ही क्या। इन काले दागों को चमकाया था, कालापानी मिटा देगा, इसलिए आज उसके किनारे आ बैठा हूँ। जितनी भी हमारी बातें हैं, उन्हें आज हँसते-हँसते कह देना चाहता हूँ। तो जन्म दिन के समारोहवाली उस बात को खत्म कर लूँ। है न एली?'

'अंतू, मन बड़ा चंचल हो रहा है। ध्यान नहीं दे पा रही हूँ।'

'हम दोनों के जीवन में ध्यान देने योग्य जो कुछ भी शेष बचा है, वह सिर्फ उन्हीं थोड़े से हलके दिनों की याद में बचा है। भूलने लायक भारी-भारी दिन ही तो ज्यादा हैं हमारे पास।'

'अच्छा, सुनाओ।'

'तो उस दिन जन्मदिन का खाना-पीना हो गया। अचानक नीरद को शौक चर्राया कि चलो, 'प्लासी का युद्ध' पढ़ा जाए। वह उठकर खड़ा हो गया और हाथ फेंक-फेंककर गिरीश घोष के ढंग से सुनाने लगा। नीरद आदमी अच्छा है, बहुत ही। सीधी-सीधा है, लेकिन उसकी स्मरण-शक्ति बड़ी निर्दय है। जब सभा भंग करने के लिए मैं अकुला रहा था, तब उन लोगों ने भवेश से गाने को कहा। वह बोला कि बिना हारमोनियम के यह

संभव नहीं। खैर, तुम्हारे यहाँ वह पाप था ही नहीं। बला टली। मैं बड़ी आशा से सोच रहा था कि अब उपसंहार की बारी आई। लेकिन इतने में सतू ने बेकार ही बहस छेड़ दी कि आदमी का जन्म जन्मदिन में होता है या जन्मतिथि में? बहुत रोका, लेकिन वह रुका ही नहीं। बहस में देशाभिमान की गंध आने लगी, स्वर में तेजी आ गई, यहाँ तक कि बंधुविच्छेद तक की नौबत आ गई। मुझे बड़ा गुस्सा आया तुम पर। मेरे जन्म दिन का तो सहज एक बहाना था—असल में उद्देश्य था अपने सहकर्मियों को इकट्ठा करना।

'कौन-सा बहाना था और कौन-सा उद्देश्य—इसे तुम बाहर से सोचने की कोशिश न करो, अंतू। दंड के योग्य मैं अवश्य हूँ, लेकिन अनुचित दंड न दो। शायद तुम्हें याद नहीं कि उस जन्मदिन के समारोह में ही तो अतींद्रबाबू ने मुझसे 'अंतू' नाम पाया था। यह कोई मामूली-सी बात नहीं। अपने अंतू नाम का भी तो इतिहास बताओ, जरा सुनूँ।'

'हाँ, प्रिय, सुनो। तब मेरी उम्र चार-पाँच साल की होगी। देह ठिगनी थी, मुँह में बोल न था, सुना है कि तब मेरी आँखों में बेवकूफी साफ झलका करती थी। उस समय ताऊजी पश्चिम से आए तो पहले पहल उन्होंने मुझे देखा। मुझे गोद में उठा लिया और बोले, इस 'बालखिल्य का नाम अतींद्र किसने रखा? यह तो अतिशयोक्ति अलंकार है। इसका नाम रखो अनतींद्र। वही अनीत स्नेह से अंतू हो गया। और तुम्हारे सामने भी एक दिन अनीत अति बन गया था—तो इस तरह अपना सम्मान मैंने अपनी इच्छा से खोया है।'

सहसा अतीन चौंक पड़ा और बोला, 'किसी के पैरों की आहट-सी मामूल होती है।'

एला बोली, 'अखिल है।'

तभी आवाज आई, 'दीदी।'

जीने का दरवाजा खोलकर एला ने पूछा,'क्या है?'

अखिल बोला, 'खाना आया है।'

'घर में रसोई का इंतजाम नहीं है। पास के एक ढाबे से खाना आया करता है।'

एला बोली, 'अंतू, खाने चलो।'

'खाने-पीने की बात न करो। भूख से मरने में आदमी को बहुत दिन

लगा करते हैं। वरना, अब तक भारतवर्ष टिका न होता। भाई अखिल, अब नाराजी न रखना अपने मन में। मेरा हिस्सा तुम्हीं खा लो। इसके बाद 'पलायनेन समापयेत्—भाग जाना, जितनी दूर हो सके।'

अखिल चला गया।

दोनों फिर से अपनी-अपनी जगह बैठ गए। अतीन ने फिर से कहना शुरू किया।

'तो, उस दिन जन्मदिन का समारोह काफी तेजी से चलने लगा। फिर किसी ने उठने का नाम तक नहीं लिया। मैं बार-बार घड़ी देख रहा था, लेकिन जैसे सबको रतौंधी हुई हो, भला वे मेरा इशारा क्यों समझने लगे। अंत में तुमने ही कहा था कि तुम्हें जल्दी सो जाना चाहिए क्योंकि हाल ही में तुम इन्फ्लुएंजा से उठी हो। किसी ने प्रश्न किया कि कितने बजे हैं। उन्हें बताया गया कि साढ़े दस। तब कहीं जाकर सभा के भंग होने के लक्षण दिखाई दिए। बटू ने कहा था आप तो बैठ ही गए, अतीन बाबू। चलिए, साथ ही चलिए। कहाँ? तो उन्होंने बताया कि भंगियों के मुहल्ले में चलना होगा और अचानक पहुँचकर उनकी शराबखोरी बंद करनी होगी। यह सुनकर मेरे को ऊपर से नीचे तक आग लग गई। मैंने कहा था कि शराब तो बंद कर दोगे पर उसके बदले में दोगे क्या? बात कोई ऐसी नहीं थी कि इस पर आपे से बाहर होने की जरूरत होती, लेकिन नतीजा यह हुआ कि जो लोग उठकर जा रहे थे वे भी रुक गए। शुरू हुआ, क्या कहना चाहते हैं आप? मैंने तुरंत ही तीखे स्वर में उत्तर दिया कि कुछ नहीं। इतना तीखापन भी ठीक न जँचा। आवाज भारी करके मैंने कनखियों से तुम्हारी तरफ देखकर कहा, तो अब चलता हूँ। दूसरी मंजिल पर तुम्हारे कमरे के सामने आते ही पैरों ने आगे बढ़ने से इंकार कर दिया। मुझे यह सूझा भी खूब। जेब पर हाथ रखकर मैंने कहा, शायद फाउंटेन पैन छूट गया। इस पर बटू बोला, मैं ढूँढ़े लाता हूँ। और वह तुरंत छत पर चला गया। पीछे-पीछे मैं भी दौड़ा। कुछ देर तक ढूँढ़ने का बहाना करके बटू ने मुस्कराकर कहा, देखिए तो, शायद आपके ही जेब में होगी। मैं तो जानता ही था कि पेन को अपने घर में ही खोजना जरूरी है। तब मुझे साफ-साफ कहना पड़ा कि एला दीदी से मुझे कुछ काम है। तो वह बोला, अच्छी बात है, मैं नीचे जाकर बैठता हूँ। मैंने कहा कि बैठने की जरूरत नहीं, जाओ तुम। तो वह मुस्कराकर बोला था, नाराज क्यों होते हैं,

अतीन बाबू? मैं जाता हूँ।'

फिर से पैरों की आहट सुनकर अतीन चौंक पड़ा। अखिल छत पर आया और बोला एक आदमी ने यह परचा दिया है अतीन बाबू के लिए। उसे सड़क पर ही खड़ा करके आया हूँ।

एला की छाती धक से हो उठी। वह बोली, 'कौन आया है?'

अतीन ने कहा, 'उसे भीतर ले आओ न।'

अखिल ने जोर के साथ कहा, 'नहीं, हरगिज नहीं।'

अतीन बोला, 'डर की कोई बात नहीं, तुम उन्हें पहचानते तो हो, कई बार देखा होगा उन्हें।'

'नहीं, मैं नहीं पहचानता।'

'खूब पहचानते हो। मैं कह रहा हूँ, डरो मत, मैं तो मौजूद हूँ।'

एला ने कहा, 'अखिल, जाओ, तुम बेकार डरो मत।'

अखिल चला गया

एला ने पूछा, 'बटू आया है क्या?'

'नहीं, बटू नहीं है।'

'तो बताओ न कौन है? मुझे अच्छा नहीं लगता।'

'छोड़ो इस बात को। मैं जो कह रहा था उसे कहने दो।'

'अंतू, मेरा चित्त किसी भी तरह ठिकाने नहीं लग रहा है।'

'एला, मुझे अपनी कहानी को खतम कर लेने दो। ज्यादा देर नहीं लगेगी। तो, उसके बाद तुम छत पर चली आई। रजनीगंधा की मधुर सुगंध वातावरण में भर गई। फूलों का गुच्छा तुमने सबसे छिपाकर रखा था एकांत में मुझे देने के लिए। इस प्रकार हम दोनों के संबंध के क्षेत्र में अंतू का यह जीवन इन्हीं लज्जालु फूलों की गुप्त अभ्यर्थना में शुरू हुआ था। उसके बाद तो अतींद्रनाथ की विद्या, बुद्धि और गंभीरता धीरे-धीरे आत्मविस्मृति के अतल गर्त में समा गई। उसी दिन पहली बार तुमने मेरे गले में बाँहें डालकर कहा था, यह लो, अपने जन्मदिन का उपहार। वहीं मिला था मुझे तुम्हारा प्रथम चुंबन। और आज मैं अंतिम चुंबन का दावा लेकर आया हूँ।'

अखिल ने आकर कहा, 'उसने तो दरवाजे पर धक्के मारना शुरू कर दिया। लगता है, जैसे तोड़ ही डालेगा। कहता है कि जरूरी काम है।'

'कोई डर नहीं अखिल, दरवाजा तोड़ने से पहले ही मैं उसे ठंडा कर

दूँगा। तुम उसे उसी जगह छोड़कर और कहीं भाग जाओ। यहाँ मैं तुम्हारी दीदी की रखवाली करने के लिए काफी हूँ।'

एला ने अखिल को छाती से लगाकर उसकी ठोढ़ी चूम ली और कहा, 'मेरा राजा भैया है न! तुम जाओ, अब चले जाओ। तुम्हारे लिए मेरे आँचल में कुछ नोट बँधे हैं। इन्हें ले लो, यही दीदी की ओर से तुम्हारे लिए आशीष है। पाँव छूकर कहो कि तुम अभी चले जाओगे। देरी बिल्कुल नहीं करोगे।'

अतीन ने कहा, 'अखिल, मेरी एक बात तुम्हें सुननी ही होगी। अगर कोई तुमसे पूछे तो तुम सच्ची-सच्ची बात बता देना। कहना कि रात के इस ग्यारह बजे के समय मैंने ही तुम्हें जबर्दस्ती घर से निकाल दिया है। अब चलो, मैं अपनी इस बात को सही सिद्ध कराऊँ।'

एला ने एक बार फिर से अखिल को अपने पास खींच लिया। बोली, 'तुम मेरी फिक्र न करना। तुम्हारे अंतू भैया तो हैं ही मेरे पास, डर की कोई बात नहीं।'

अतीन जब अखिल का हाथ पकड़कर ले जाने लगा तो एला ने कहा, 'मैं भी चलती हूँ तुम्हारे साथ, अंतू।'

लेकिन आदेश के स्वर में अतीन बोला, 'नहीं, हरगिज नहीं।'

एला चुपचाप छत की मुंडेर पर छाती दबाए खड़ी रही! अंदर से रुलाई आकर उसके गले में घुमड़ने लगी। वह समझ गई कि आज की रात हमेशा के लिए अखिल उसके पास से चला गया।

अतीन लौटकर आया तो एला ने उससे पूछा, 'क्या हुआ, अंतू?'

अतीन ने कहा, 'अखिल चला गया। मैंने भीतर से दरवाजा बंद कर लिया।'

'और वह आदमी?'

'उसे भी छोड़ दिया। वह बैठा-बैठा सोच रहा था कि शायद काम से जी चुराकर मैं बातें ही करता रहूँगा, जैसे कोई किस्सा-कहानी हो रही हो। और असल में है भी यही, सब किस्सा-कहानी ही तो है। डर लग रहा है, एला? मुझसे तुम डरती नहीं?'

'तुमसे डरूँ, यह क्या कह रहे हो तुम!'

'मैं क्या नहीं कर सकता। पतन की सीमा तक तो आ पहुँचा हूँ। उस दिन हमारे दल के लोग एक अनाथ विधवा का सर्वस्व लूट लाए। मन्मथ

बुढ़िया की जान-पहचान का, उसके गाँव का आदमी था। वह सब को खबर देकर रास्ता बताता हुआ वहाँ तक ले गया। लेकिन छद्म वेश में भी विधवा ने उसे पहचान लिया। बोली, 'मनू बेटा, तू ऐसा काम कैसे कर सका?' इसके बाद तो उस बुढ़िया को जीने भी नहीं दिया गया। जिसे हम देश की आवश्यकता कहते हैं, उसी आत्म-धर्मनाशक आवश्यकता के लिए इन्हीं हाथों से वे रुपए यथास्थान पहुँचे थे। उन्हीं रुपयों से अपना उपवास तोड़ा था। इतने दिनों बाद चोरी के कलंक से अब कलंकित हुआ हूँ—चोरी का माल छुआ है, उसका भोग किया है। और बटू ने भंडाफोड़ कर दिया है कि यह चोरी अतीन ने की है। कहीं ऐसा न हो कि सबूत न होने पर सजा न हो या कम हो, इसलिए उसने पुलिस सुपरिंटेंडेंट की मार्फत कमिश्नर से यह हुक्म मँगाने का इरादा कर रखा है कि मुकदमा अंग्रेज मजिस्ट्रेट के बजाय देशी मजिस्ट्रेट के इजलास में हो। वह निश्चित जानता है कि मैं कल जरूर पकड़ा जाऊँगा। इस बीच तुम मुझसे मत डरो, मैं खुद अपनी मृत आत्मा के भूत से डरता हूँ। आज तुम्हारे घर में और कोई नहीं है।'

'क्यों, तुम तो हो ही।'

'लेकिन मेरे हाथ से तुम्हें बचाएगा कौन?'

'न ही बचाए तो क्या हुआ!'

'तुम्हारे अपने ही दल में जो तुम्हारे देश-भाई थे और तुम्हें एला दीदी कहा करते थे और हर भैयादूज पर जिनके माथे पर तुमने तिलक लगाया है, उन्हीं लोगों में चर्चा हो रही है कि अब तुम्हारा जीवित रहना ठीक नहीं है।'

'क्यों, उनसे बढ़कर ज्यादा अपराध मैंने क्या किया?'

'तुम्हें बहुत-सी बातें मालूम हैं, बहुतों के नाम-धाम जानती हो तुम। पुलिस की यातना से तुम सब कुछ उगल सकती हो।'

'नहीं, हरगिज नहीं।'

'कैसे कहूँ कि जो आदमी अभी आया था वह यही हुक्म लेकर आया था? और हुक्म का जोर कितना है यह तो तुम जानती ही हो।'

एला चौंक पड़ी और बोली, 'सच कह रहे हो अंतू, क्या सच है यह?'

'हम लोगों को एक खबर मिली।'

'कैसी खबर?'

'आज पौ फटने के पहले ही तुम्हें पुलिस पकड़ने आएगी।'

'कल बटू की चिट्ठी मिली थी। उसने खबर दी थी कि पुलिस मुझे पकड़ने वाली है। और यह भी लिखा था कि वह मुझे बचा सकता है।'

'कैसे?'

'वह कहता है कि अगर मैं उससे ब्याह कर लूँ तो मेरी जमानत देकर मेरी जिम्मेदारी ले सकता है।'

अतीन का चेहरा काला पड़ गया, उसने पूछा, 'तो तुमने क्या जवाब दिया?'

एला ने कहा, 'मैंने उस चिट्ठी पर इतना लिख दिया था—नीच पिशाच। बस, और कुछ नहीं।'

'खबर मिली है कि कल पुलिस के साथ बटू भी आएगा। तुम्हारी सम्मति मिलते ही वह तुम्हें शेर के मुँह से बचाकर मगर के गड्ढे में शरण देने के लिए कमर बाँधकर तैयार हो जाएगा। उसका हृदय बड़ा कोमल है।'

एला ने अतीन के पाँव पकड़कर कहा, 'मार डालो मुझे, अंतू। तुम अपने ही हाथों मारो। इससे बढ़कर सौभाग्य और कुछ नहीं हो सकता।'

यह कहते-कहते वह उठ खड़ी हुई और बार-बार अतीन का चुंबन लेते हुए बोली, 'लो, इसी समय मार डालो।' और छाती खोलकर वह मरने के लिए तैयार हो गई।

अतीन पत्थर की मूर्ति की तरह कठोर बना खड़ा रहा।

एला ने कहा, 'जरा भी न सोचो 'अंतू' मैं तुम्हारी हूँ, बिल्कुल तुम्हारी हूँ। मरने पर भी तुम्हारी ही रहूँगी। लो मुझे अंगीकार करो। इस देह पर किसी के गंदे हाथ न लगने देना, मेरी यह देह तुम्हारी ही है।'

अतीन ने कठोर स्वर में कहा, 'जाओ, अभी सोने चली जाओ। मैं आज्ञा देता हूँ तुम अब सोने चली जाओ।'

अतीन को अपनी भुजाओं में कसकर एला कहने लगी, 'अंतू, मेरे अंतू। देवता मेरे। मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूँ—आज तक मैं तुम्हें यह ठीक से जता न सका। अपने उसी प्रेम की दुहाई देती हूँ—लो, मुझे मार डालो।'

अतीन एला का हाथ पकड़कर जबरदस्ती उसे सोने के कमरे में खींच ले गया और बोला, 'सो जाओ, अभी इसी वक्त सो जाओ।'

'नींद नहीं आएगी।'

'नींद की दवा है मेरे हाथ में।'

'उसकी कोई जरूरत नहीं है, अंतू। मेरे चैतन्य का अंतिम क्षण तक तुम ही लो। क्या 'क्लोरोफार्म' लाए हो? फेंक दो उसे। मैं डरपोक नहीं हूँ। यही करो कि मैं जगती हुई अपने होश में तुम्हारी गोद में मर सकूँ। मेरा यह अंतिम चुंबन आज अनंत हुआ, अंतू। अंतू।'

इतने में दूर से सीटी की आवाज आई।

❖❖❖